Fortnightly per copy Rs. 4/- only

ओ३म्

3rd February 2018

आर्य जीवन

ఆర్య జీవన్

Date of Publication 2nd & 17th of every month, Date of Posting 3rd & 18th of every month

మహర్షి దయానంద సరస్వతి జన్మదిన మరియు ఋషి బోధోత్సవ సంధర్భమున వ్యాసరచన పోటి

ఆర్య !

ఆర్య సమాజం అధ్యక్షులకు, మంత్రివర్యులకు, అధికారులకు, ఉపాధ్యాయులకు మరియు కార్యకర్తలకు తెలియజేయడమేమనగా స్వామి దయానంద సరస్వతి జన్మదినమును మరియు ఋషి బోధోత్సవమును పురస్కరించుకొని **"దయానంద సరస్వతి మరియు ఆర్య సమాజము"** అనే విషయముపై పదవ తరగతి వరకు చదువుచున్న విద్యార్థులకు మరియు పదవ తరగతితో ఉత్తీర్ణులైన విద్యార్థులకు ఆర్య ప్రతినిధి సభ ఆధ్వర్యములో వ్యాస రచన పోటి నిర్వహించుటకు నిర్ణయించనైనది. ప్రతి ఆర్య సమాజము నుండి గాని విద్యాలయమునుండి గాని లేదా ఏ గ్రామము నుండియైనగాని ఇద్దరేసి విద్యార్థులను పోటిలో పాల్గొనడానికి పంపించవలెనని కోరుచున్నాము. పోటి హైదరాబాద్‌లో పండిత్ నరేంద్రభవనములో

1) 18 ఫిబ్రవరి 2018 ఆదివారము నాడు ఉదయం 11.00 గం॥లకు నిర్వహించబడును.
2) పోటిలో పాల్గొనే విద్యార్థుల వయస్సు 16 సంవత్సరాల కంటే ఏక్కువ ఉండకూడదు.
3) పోటిలో పాల్గొనే విద్యార్థులు తెలుగు, హింది, ఆంగ్ల భాషలలో ఏ ఒక్క భాషలోనైన వ్రాయవచ్చును.
4) పోటిలో నెగ్గిన వారికి రూ॥ 5,000/- ప్రథమ బహుమతిగా, రూ॥ 3,000/- ద్వితీయ బహుమతిగా, రూ॥ 2,000/- తృతీయ బహుమతిగా మరియు రూ॥ 1000/- చొప్పున నాల్గవ, ఐదవ బహుమతి ఇవ్వబడును.
5) ఏ భాషలో వ్యాసము వ్రాసిన పై బహుమతులు మాత్రమే ఇవ్వబడుతాయి. ప్రతి భాషలో వేరు వేరుగా బహుమతులు ఇవ్వబడవు.
6) పోటిలో పాల్గొనే విద్యార్థులకు మాత్రమే హైదరాబాద్‌కు వచ్చి పోయే మార్గ వ్యయము (బస్సుగాని, రైలు ఖర్చులు గాని) ఇవ్వబడును.
7) పోటిలో పాల్గొన్నవారికి, వారి సహాయకులకు భోజన వసతి ఆర్యప్రతినిధి సభ ద్వారా ఏర్పాటు చేయబడును.
8) పోటిలో పాల్గొన్న విద్యార్థులందరికి సర్టిఫికెట్ మరియు మొమెంటో ఇవ్వబడును.
9) 18 ఫిబ్రవరి 2018 నాడే పరిణామము తెలియజేసి అదే రోజున పారితోషికము, సర్టిఫికెట్ మరియు మొమెంటోలు ఇవ్వబడుతాయి.
10) సంబంధిత ఆర్య సమాజ అధికారులుగాని, ప్రధాన ఉపాధ్యాయులుగాని, ఉపాధ్యాయులుగాని, కార్యకర్తలుగాని పోటిలో పాల్గొనే విద్యార్థులకు సంబంధిత సాహిత్యమును అందజేయవలెను. మీ-మీ స్థానములో విద్యార్థులను సంసిద్ధము చేసి ఇద్దరేసి విద్యార్థులను మాత్రమే హైదరాబాద్‌కు తీసుకొని రాగలరు. సాయంత్రం వరకు సమావేశము అయిపోవును ఆ తదుపరి తిరుగు ప్రయాణము చేయవచ్చును.

పోటి నిర్వహించుటకు ప్రత్యేకముగా ఆర్య ప్రతినిధి వారు తన కార్యవర్గ సమావేశములో సుదీర్ఘంగా చర్చచేసి నిర్ణయించినది కావున సమాజము వారు తమకు సంబంధించిన పాఠశాలల నుండిగాని, ఇతర పాఠశాలల నుండిగాని విద్యార్థులను పోటిలో పాల్గొనడానికి (ప్రతి ఊరి నుండి ఇద్దరేసి విద్యార్థులను మాత్రమే) పంపించవచ్చును. తప్పనిసరిగా భావితరాలకు స్వామి దయానంద సరస్వతి గురించి మరియు ఆర్య సమాజము గురించి తెలియచేయడానికి ప్రతివారు భాగస్వాములై కార్యక్రమమును దిగ్విజయముజేయగలరని ప్రత్యేకంగా కోరుచున్నాము. భవిష్యత్తులో సైద్ధాంతిక పరీక్షలు కూడ నిర్వహించడానికి నిర్ణయించనైనది.

పై విషయములో ఏదైన సందేహమున్నచో క్రింది వారితో సంప్రదించవచ్చును.

1) శ్రీ ఆర్ రాంచంద్ర కుమార గారు 2) శ్రీ హరికిషన్ వేదాలంకార్ గారు 3) ఆచార్య విశ్వశ్రవ గారు 4) పండిత్ ప్రియదత్ శాస్త్రి గారు 5) శ్రీ జగన్‌మోహన్ గారు, నల్గొండ 6) ఆచార్య వేదమిత్ర గారు, నిజామాబాద్.

భవదీయ

విఠల్‌రావు ఆర్య, సభ మంత్రి

ఆర్య ప్రతినిధి సభ, సుల్తాన్ బజార్, ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ

ఫోన్ : 040-66758707, 24753827, 24756983, 9849560691.

आर्य प्रतिनिधि सभा, आ.प्र.-तेलंगाना
२१ जनवरी २०१८ के अंतरंग सभा की बैठक में लिये गये निर्णयानुसार
ऋषि दयानन्द जन्मोत्सव एवं ऋषि बोधोत्सव के उपलक्ष में
दिनांक १८ फरवरी २०१८ रविवार के दिन प्रातः ११.०० बजे से
निबंध प्रतियोगिता का आयोजन किया जाए एवं
नवम्बर २०१८ में प्रांतीय आर्य महासम्मेलन का आयोजन होगा।

आर्य प्रतिनिधि सभा, आ.प्र.-तेलंगाना की अंतरंग सभा की बैठक में उपस्थित प्रतिनिधियों को संबोधित करते हुए सभा मंत्री श्री विट्ठल राव आर्य एवं पं. धर्मपाल शास्त्री जी का सम्मान करते हुए सभा प्रधान श्री ठा. लक्ष्मण सिंह जी।

सर्वहुत यज्ञोमय जीवन वाले थे स्वामी जी

-आयार्य महावीर सिंह

पूज्य स्वामी जी महाराज जी को जैसे ही स्मरण करते हैं तो उनका यज्ञों के लिए समर्पित जीवन सामने जीवन्त हो जाता है। यजुर्वेद का मंत्र है- **आयुर्यज्ञेन कल्पतां प्राणो यज्ञेन कल्पतां चक्षुर्यज्ञेन कल्पतां श्रोत्रं यज्ञेन कल्पतां-**'' मेरी आयु मेरे प्राण, मेरीी आंखे, मेरे कान, मेरी वाणी, मेरा मन, मेरी आत्मा, मेरा ज्ञान, मेरी प्रतिभा, मेरा सुख, मेरे उत्तम कर्मों के फल, उत्तम स्थान, मेरा यज्ञ, यह सभी ही यज्ञ के लिए समर्पित हैं। महर्षि दयानन्द जी ने यज्ञ से यहां पर विष्णु लिया है। **यज्ञो वैः विष्णु** - यज्ञ ही विष्णु है। जो संसार में व्याप्त होकर रह रहा है। वह विष्णु है। इस प्रकार से यज्ञ ही विष्णु है, क्योंकि **यज्ञो वैःदाधार पृथिवीं**। यज्ञ से ही सारा संसार टिका हुआ है। यज्ञ ने ही सारे संसार को धारण कर, रखा है। यज्ञ नाम विष्णु का है। विष्णु परमात्मा का भी नाम है। वह विष्णु रूपी परमात्मा सारे संसार में व्याप्त होकर रह रहा है। इसलिए संसार की जितनी भी वस्तुएं हैं वे उसी परमात्मा की हुई। वेद पुनः कहता है :- **ईशावास्यमिदम् सर्व यदकिंचिद् जगत्यां जगत्** - संसार में जो भी पदार्थ दिखाई दे रहे हैं अथवा न भी दिखाई दे रहे हैं, उन सब में ही ईश्वर समाया हुआ है। अतः यह समस्त ब्रह्माण्ड उसी ईश्वर का है। फिर इस जगत में जो भी पदार्थ तुम्हें प्राप्त हो रहे हैं। अपने कर्मों के हिसाब से सुख वैभव तुम्हें प्राप्त हो रहे हैं। यह शरीर जो तुम्हें प्राप्त हुआ है। इस शरीर की आयु, अथवा अवधि, प्राण, आंख, नाक, कान आदि इन्द्रियां प्राप्त हुई हैं, यह सब भी तो उसी ईश्वर के हुए। हमें यह सब साधन के रूप में मिले है - इसलिए इन सब को उसी ईश्वर को समर्पित कर इनका उपयोग करना चाहिए। न कि स्वार्थ व लिप्सा के वशीभूत होकर इनमें लिप्त होना चाहिए। मनुष्य जब इस प्रकार से सोच समझ कर जीवन में कर्म करता है। तो उसके वह कर्म गलत नहीं होते। ईश्वर को साक्षी मानकर उसे ही अपने समस्त कर्मों को समर्पित कर अपने कर्तव्य कर्मों को जब करता है, तो उसमें सफलता मिलती है। अपार सुख मिलता है। शान्ति मिलती है। हानि, लाभ, सफलता, असपलता, सुख, दुःख इन सब को वह समान रूप से स्वीकार करता है, क्योंकि गीता में श्री कृष्ण जी भी कहते हैं **सुख दुःखें समेकृत्वा लाभालाभौ जया जयौ-**। उसने तो ईश्वर को समर्पित कर कर्म किया है। निर्लिप्त भाव से कर्म किया है। अनासक्त भाव से कर्म किया है। ईश्वर का काम समझ कर कर्म किया है। कर्म करना मेरा कर्तव्य है, क्योंकि **कर्म ज्यायोह्यकर्मणः** कर्म न करने से कर्म करना श्रेष्ठ है। यह मानकर कर्म किया है। अतः आगे का जो परिणाम है वह उसी ईश्वर के हुए, फिर तत् जन्य सुख-दुःख, हानि-लाभ से वह निर्लिप्त होता है, और यही भाव शान्ति का परम धाम है। उस शान्ति का जिसकी खोज में यह आत्मा निरन्तर भटक रही है। जन्म-जन्मातरों तक भटकती रहती है। **यस्य छायाऽमृतम् यस्य मृत्युः** उस वेद भगवान के आश्लय से अलग होकर भटकती रहीती है। तब तक भटकती रहती है। जब तक उसके आश्रय में नहीं आ जाती। जब तक उसके दामन को नहीं थाम लेती। क्योंकि जिसकी छाया आस्लय लेना ही मोक्ष सुख का कारण है। यानि अत्यन्त सुख देने वाला है। और जिसका आश्रय न लेना ही बार-बार जन्म-मरण रूपी महाकष्टकारी मृत्यु आदि दुःखों का कारण है। अर्थात् जिससे दूर होकर प्राणी अन्धकारमय योनियों में भटकते हुए महान दुःखों, महान कष्टों को प्राप्त करता है। अतः जो कुछ भी परमात्मा की कृपा से प्राणी को, आत्मा को प्राप्त है। उसे परमाता को समर्पित कर उनका उपयोग करें उचित प्रयोग क़रें। इसी को यज्ञ कहते है। यज्ञ का अभिप्राय समर्पण भी है।

पूज्य स्वामी जी महाराज ने उपरोक्त मंत्र को अपने जीवन में अक्षरसः उतार दिया था। उनके हर कार्य कलाप ईश्वर को समर्पित होते थे। **अयंत इध्मात्मा जात देदसे,** हे परमात्मन्, हे जातवेद मेरी यह आत्मा तेरी समिधा है। इसे मै तुझे ही समर्पित कर रहा हूं। इस मेरी आत्मा रूपी समिधा से आप प्रदीप्त हों। यज्ञ करते हुए यज्ञमान अग्नि को सम्बोधित करके यह वचन कहता है। आध्यात्मिक रूप से अग्नि स्वरूप परमात्मा को सम्बोधित कर ज्ञानी अपनी आत्मा को समिधा बनाकर परमात्मा को सम्बोधित करता है। वास्तव में परमात्मा का प्रकाशन इस आत्मा से ही होता है। आत्मा न हो तो इस परमात्मा को कौन जानेगा। इसलिए साधक कहता है परमात्मन् मेरी यह आत्मा तेरी इध्म है। इसके अन्दर यह शक्ति दो यह सामर्थ्य दो जिससे यह वह कार्य करने में समर्थ हो। जिससे तेरी महानता का ज्ञान लोगों को हो। इस इध्म के द्वारा आप स्वयं प्रकाशित होते हुए हमें भी प्रकाशित करो। साथ ही साथ प्रजाओं, पशुओं से हमे युक्त करो। हमें ब्रह्म, वर्चस् ज्ञानादि से युक्त करो। अन्नादि से भरपूर करो। वास्तव में मानव जब समिधा बना अपने आपको परमात्मा के प्रति समर्पित कर देता है, तो उसका जीवन चमक उठता है। उसे किसी भी प्रकार की कोई कमी नहीं रहती। स्वामी जी के साथ रहकर हमने यह सब साक्षात रूप में देखा, और प्रत्यक्ष रूप में जाना। स्वामी जी के पास में कुछ भी न होने के बाद भी जब वे **भूर्भुवः स्वः स्वर्द्यौरिव भूम्ना** - कह कर संकल्प अग्नि को प्रज्वलित कर देते। उसे उस प्रभु के प्रति समर्पित कर देते, बस वह जातवेद स्वयं भी प्रकाशित होते हुए पूज्य स्वामी जी के प्रकाश को भी चारों ओर फैला देते। उन्हें हर प्रकार से भरपूर कर देते स्वामी जी के जीवन में न मान की कमी रही, न ज्ञान की, न धन की। यह सब उनकी ओर अविरल भाव से प्रवाहित होते रहे। परम कृपालू प्रभू अंजलिया

शेष ११ पेज पर

नेताजी सुभाषचन्द्र बोस में आध्यात्मिक चेतना

-मनुदेव 'अभय' विद्यावाचस्पति

सुभाष बाबू की भारतीय जीवन मूल्यों में अगाध श्रद्धा थी। उन्होंने समय-समय पर कुछ सांस्कृतिक यात्राएं की थीं। इसी संदर्भ में आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वान प्रो. डॉ. कुशलदेव शास्त्री ने गुरुकुल कांगड़ी शताब्दी उपलक्ष्य में एक बहुत ही सारगर्मित लिखा है।

नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने अपने कुछ संस्मरण स्वयं लिपिबद्ध किए थे, जो 'नेताजी सम्पूर्ण वाड्मय' में प्रकाशित हुए हैं। इनसे प्रतीत होता है कि नेताजी ने गुरुकुल कांगड़ी और वृन्दावन की यात्रा की थी। नेताजी के शब्दों में इस यात्रा का वर्णन इस प्रकार है-

सन् १९१४ के ग्रीष्मावकाश में मैं अपने एक और मित्र के साथ तीर्थाटन के लिए निकल पड़ा। सभी स्थानों पर हम जितने साधुओं से मिल सकते थे, मिलते गए . हमनें गुरुकुल और ऋषिकुल जैसी शिक्षा संस्थाओं को भी देखा। हरिद्वार में एक आश्रम में लोगों को हमारे पहुंचने पर चिन्ता हुई। क्योंकि वे नहीं सोच सोंच सके कि हम सचमुच अध्यात्म से प्रेरित युवक हैं, अथवा उस रूप में छिपे क्रान्तिकारी।

वह यात्रा लगभग दो महीने को थी और इसके दौरान हंम अनेक साधु-सन्तों से मिले बल्कि हमने हिन्दू समाज की कुछ स्पष्ट कमियों को भी देखा। इस प्रकार मैं घर लौटा तो पहले से अधिक जानकारी बटोर कर और साधु-संन्यासियों के प्रति अपनी पहले से अधिक श्रद्धा काफी हद तक खोकर। यह अच्छा हुआ कि मुझे यह अनुभव अपनी कोशिश से हुआ क्योंकि जीवन में कुछ बातें ऐसी होती हैं, जिन्हें हमें अपने आप ही जानना होता है। मथुरा में हम एक पण्डे के घर मे रहे और एक साधु के पास गए जो यमुना के उस पर जमीन की सतह के नीचे एक खोह में रहता था। उसने हमें सलाह दी कि हम घर लौट जाएं और संसार त्याग का विचार छोड़ दें। मुझे स्मरण है कि एक विरक्त द्वारा दी गई इस प्रकार की सलाह पर मुझे बहुत क्रोध आया था। जब हम मथुरा में रहते थे। तो एक आर्य समाजी के बड़े मित्र बन गए। वे हमारे साथ के मकान में रहते थे। इसे हमारा पण्डा सहन नहीं कर सका और उसने चेतावनी दी कि ये आर्य समाजी बड़े खतरनाक होते हैं, क्योंकि ये मूर्तिपूजा का विरोध करते हैं। मथुरा में बन्दर जिन पर किसी प्रकार भी काबू नहीं पाया जा सकता था, ये हमें लगातार परेशान करते थे। अगर कोई भी दरवाजा या खिड़की जरा भी खुली रह जाती ती वह अन्दर घुस जाते और जो कुछ मिलता उसे उठा ले जाते या चिथड़े-चिथड़े कर देते। मथुरा छोड़ने पर हमें कोई अफसोस नहीं हुआ और हम वृन्दावन पहुंचे। वहां कई पण्डों ने हमें घेर लिया और रहने तथा खाने-पीने का प्रबन्ध करने की बात कही। उनके चुंगल से छूटने के लिए हमनें कहा कि हम गुरुकुल जाना चाहते हैं। उन्होंने तुरन्त अपने कानों में उंगली दी और कहा कि हमें यह किसी भी हिन्दु को कहां नहीं जाना चाहिए। लेकिन उन्होंने इतनी भलमन साहत दिखाई कि हमारा पीछा छोड़ दिया। (वैदिक गर्जना २००२)

नेताजी सुभाष के पूर्वज वस्तुतः बंगाल के चौबीस-परगना जिले के कन्दालिया ग्राम के निवासी थे। सुभाष बाबू का जन्म कटक में २३ जनवरी १८९७ को हुआ था। कटक में ही इनकी प्रारम्भिक शिक्षा हुई। आपने बी.ए. में दर्श शास्त्र विषय लिया था। इस कारण सुभाष आयु में ज्यों-ज्यों बड़े होते गए त्यों-त्यों उनमें गम्भीरता बढ़ती गई। सहपाठी नेतृत्व तथा संगठन गुण के कारण इनका खूब सम्मान करते ते। यद्यपि इनके पिता राजभक्ति की प्रवृति के व्यक्ति थे। किन्तु सुभाष बाबू में राषट्रभक्ति हिलोरे ले रही थी। सन् १९२० में आई.सी.एस. परीक्षा में चौथे स्थान पर उत्तीर्ण होकर सबको अचम्भित कर दिया। राजद्रोही सुभाष बाबू को सरकारी नौकरी कैसे सुहाती। नौकरी से त्याग पत्र देकर देशबन्धु की सेना में स्वयंसेवक बन गए। फिर राष्ट्रीय विद्यापीठ में आचार्य और कांग्रेस स्वयं सेवक दल के कप्तान बनाए गए। प्रिंस ऑफ वेल्स के स्वागत के बहिष्कार के सम्बन्ध में सुभाष बाबू प्रथम बार गिरफ्तार हुए और उन्हें छः माह को सजा दी गई। सन् १९२८ की कलकता कांग्रेस में जनयात्रा में चलने वाले स्वयंसेवक दल के सेनानी सुभाष को बहुत प्रसिद्धि मिली। बाद में इण्डीपैण्डेंस लीग के प्रचार कार्य में लग गए। सन् १९३८ में कांग्रेस के हरिपुरा अधिवेशन में वे कांग्रेस के अध्यक्ष चुन लिए गए। एक बार विदेश यात्रा वे डी. वेलेश और मुसोलिनी से मिले। इधर भारत सरकार का कथन था कि यदि तुम्हें भारत में रहना है तो जेल में रहो। २६ जनवरी १९४१ को सुभाष बाबू वेश बदलकर जियाउद्दीन नकर देश से बाहर निकल गए। २१ अक्टूबर १९४३ में उन्होंने आजाद भारत की अस्थाई सरकार की घोषणा कर दी। जापान, इटली आदि अनेक सरकारों ने इस सरकार की स्वतन्त्र सत्ता को स्वीकार कर लिया। सुभाष द्वारा लगाई 'दिल्ली चलो' की आवाज ने सिपाहियों पर जादू सा असर किया। २८ मार्च १९४४ का वह दिन भारत के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखा जाएगा जब आजाद हिन्द की सेनाएं कोहिमा और मणिपुर के युद्ध में जी जान से जुट पड़ी थी। २३ अगस्त १९४५ के बाद का जीवन आज तक भी रहस्य के पर्दे में है। हाँ, सुभाष' जिन्दा है, प्रत्येक भारतवासी के हृदय में तो अवश्य ही जिन्दा है।

शहीद

शहीद की राख से कौम की साख बनती है,
शहीद को मौत से कौम की हयात नती है।

शहीद का लहू सर्द लहू को गरमा देता है।
शहीद शहादत से सोई कौम जगा देता है।

मुल्क का सरमाया कीमती जर होता है शहीद,
हमारतें कौम में नींव का पत्थर होता है शहीद,

हर कौम एक जिंदा यादगार है शहीदों की,
दुनिया की हर कौम कर्जदार है शहीदों की।

जिस कौम में शहीदों की याद रहती है,
वो कौम फलती है खुश व याद रहती है।

जो कौम कद्र नहीं करती शहीद के एहसानों की,
वो कहलाने की हकदार नहीं कौम इंसानों की।

शहीद के जनाजे की अनौखी शान होती है
दफन हो जहां वो जगह तीर्थ स्थान होती है।

जिन्दगी से मोहब्वत नहीं जिसे मौत से प्यार है,
सच पे मिटने वाला आजाद शहीदों का हकदार है।

डॉ. दर्शनलाल आजाद, पानीपत

योगेश्वर एवं वेदर्षि दयानन्द

-मनमोहन कुमार आर्य

आर्य समाज के संस्थापक ऋषि दयानन्द सरस्वती वेदों के उच्च कोटि के विद्वान एवं सिद्ध योगी थे। योग में सफलता, वेदाध्ययन व वेद ज्ञान के कारण उन्हें सत्यासत्य का विवेक प्राप्त हुआ था। वह ईश्वर के वैदिक सत्य स्वरूप के जानने वाले थे। वेदों में सभी सत्य विद्यायें हैं। इन सब विद्याओं का ज्ञान भी अनको वेदाध्ययन एवं योग सिद्धि से ही प्राप्त हुआ था। उन्होंने घोषणा की थी कि वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक हैं। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। ऋषि दयानन्द से पूर्व पूर्व महाभारतकाल पर्यन्त हमारे सभी ऋषि वेदों को सत्य ज्ञान का भण्डार स्वीकार करते थे। स्वामी दयानन्द जी ने ऋषि परम्पराओं को ही आगे बढ़ाया था। **हमारे सभी ऋषि योगी होते थे**। योग क्या है। **योग आत्मा को परमात्मा से जोड़ने और ईश्वर का साक्षात्कार करने की विद्या को कहते हैं**। योग मार्ग का आरम्भ महर्षि पतंजलि कृत योग दर्शन के अध्ययन से आरम्भ होता है। योग के आठ अंग हैं जो क्रमशः यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि हैं। योग मार्ग पर आरूढ़ व्यक्ति को यम व नियमों का पालन करते हुए आसन और प्राणायाम का अभ्यास करना होता है। प्रत्याहार में इन्द्रियों को उनके विषयों से वियुक्त करते हैं और धारणा में चित्त को देह के किसी एक देश, अंग विशेष अथवा लक्ष्य विशेष में बांध देते है अथवा टिका देते हैं। ध्यान में चित्त को देह के जिस अंग विशेष व लक्ष्य प्रदेश में बांधा गया था उसमें पूर्ण रूपेण एकाग्रता को बनाये रखा जाता है। जब तक एकाग्रता बनी रहती है यह अवस्था ध्यान की होती है। यदि एकाग्रता भंग होती है तो ध्यान टूट जाता है। **ध्यान की निरन्तरता व ध्यान की अवस्था ही समाधि कहलाती है**। ऋषि दयानन्द ने योग के सभी अंगों को सिद्ध किया हुआ था जिससे वह एक सफल योगी थे। मनुष्य योगी तो बन सकता है परन्तु ज्ञान प्राप्ति के लिए उसे वेदांग के अन्तर्गत शिक्षा, व्याकरण, निरुक्त व निघण्टु आदि का अध्ययन करना पड़ता है। इसके बाद वेदांग के कल्प व ज्योतिष ग्रन्थों का अध्ययन पूर्ण कर वेद्रों का अध्ययन किया जा सकता है। ऋषि दयानन्द ने वेदांग को स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी से मथुरा में पढ़ा था। इससे उनमें वेदों का अध्ययन करने की योग्यता उत्पन्न हो गई थी। शिक्षा समाप्त कर उन्होंने वेदों को प्राप्त किया और उनका आद्योपान्त अध्ययन किया जिससे वह वेदों के विद्वान बने। योगी ही वेदों का उच्च कोटि का विद्वान बनता है और ऋषि वेदों के अपूर्व विद्वान बने जिससे उनका उच्च कोटि का योगी होना सिद्ध है। **मन्त्रार्थ द्रष्टा होने से वह ऋषि कहलाये**। उन्होंने वेदों का अध्ययन कर उसका यथोचित ज्ञान प्राप्त करने के बाद उससे अपनी व्यक्तिगत उन्नति को ही सीमित नहीं किया अपितु उससे मानवमात्र को लाभान्वित करने के लिए उन्होंने वेद प्रचार का कार्य आरम्भ किया। इस कार्य को करने की प्रेरणा व आज्ञा उन्हें अपने विद्या गुरु प्रज्ञाचक्षु स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी से मिली थी।

योगेश्वर कृष्ण जी ने महाभारत युद्ध में पाण्डव पक्ष का साथ दिया और उन्हें विजय प्राप्त कराई थी। वह योगी थे और एक योगी का दो सेनाओं के बीच चल रहे युद्ध में एक पक्ष को सक्रिय सहयोग देना और उनके मार्गदर्शन में उनके पक्ष का युद्ध में विजयी होने के कारण उनको योगेश्वर कृष्ण के नाम से पुकारा जाता है। स्वामी दयानन्द जी ने भी देश व विश्व में प्रचलित अविद्यान्य सभी मतों के विरुद्धवेद प्रचार रूपी आन्दोलन वा सत्याग्रह किया था। उन्होंने सब मतों के आचार्यों को शास्त्रार्थ की चुनौती दी थी। जिन लोगों ने उनसे शास्त्रार्थ किया उन सभी शास्त्रार्थों में स्वामी दयानन्द जी के वेद सम्मत पक्ष को विजय प्राप्त हुई थी। **इस कारण वह दिग्विजयी संन्यासी बने**। इस कार्य में जहां उनका वेद ज्ञान सहयोगी था वहीं उनके ब्रह्मचर्य का बल व योग साधना का बल भी सम्मिलित था। **साम्प्रदायिक सभी मतों पर विजय प्राप्त करने के उनके दो ही कारण थे, प्रथम वह सफल योगी थे और दूसरा उनका वेद ज्ञान उच्च कोटि का था**। अतः वह दो उपाधियों के पात्र बनें। योगी होकर उन्होंने विश्व के इतिहास में जो अपूर्व धार्मिक संग्राम व सफल शास्त्रार्थ किये उनसे वह योगेश्वर सिद्ध होते हैं और वेद प्रचार व अपूर्व कोटि का वेद भाष्य करने के कारण ऋषि वा महर्षि के पद पर गौरवान्वित हैं। हमें उनके जैसा ऋषि व महर्षि विश्व के इतिहास में दूसरा दृष्टिगोचर नहीं होता है। वेदभक्त गुरु विरजानन्द जी धन्य है जिनका शिष्य संसार का उत्तम योगी व ऋषि बना और उनके माता-पिता भी धन्य हैं जिन्होंने ऋषि दयानन्द रूपी दिव्यात्मा को जन्म दिया था।

स्वामी दयानन्द जी स्वयं तको उच्च कोटि योगी व वेदों के विद्वान थे ही, इसके साथ ही उन्होंने अपने सभी शिष्यों व अनुयायियों को भी योगी व वेदों का विद्वान बनाया। सन्ध्या करके मनुष्य योगी बनता है और सत्यार्थप्रकाश पढ़कर वैदिक विद्वान बनता है। ऋषि दयानन्द जी से पूर्व भारत में चतुर्वेद भाष्यकारों में सायण का ही नाम मिलता है जिन्होंने स्वयं व अपने शिष्यों से चारों वेदों का भाष्य कराया। महीधर व उव्वट आदि के यजुर्वेद व उसके कुछ अंशों पर ही वेदभाष्य मिलते हैं। कुछ वेदभाष्यकारों के नाम तो इतिहास में ज्ञात होते हैं परन्तु उनका किया वेदभाष्य नहीं मिलता। **ऋषि दयानन्त ही एक मात्र ऐसे योगी व ऋषि हुए हैं जिन्होंने चारों वेदों पर ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका जैसा महत्वपूर्ण ग्रन्थ लिखा। वहीं वह सम्पूर्ण यजुर्वेद भाष्य**

संस्कृत व हिन्दी भाषा में पूर्ण कर दे गया हैं । लगभग साढ़े दस हजार मन्त्र वाले ऋग्वेद का भी लगभग आधा भा,ष्य वह हमें दे गये हैं । असामयिक मृत्यु के कारण वह वेदभाष्य का कार्य पूर्ण नहीं कर सके । उनका वेदभाष्य अपूर्व है जिसकी तुलना उनके पूर्ववर्ती किसी भाष्यकार से नहीं की जा सकती । क्रान्तिकारी एवं योगी अरविन्द ने उनके वेदभाष्य की प्रशंसा की है । गुणवत्ता की दृष्टि से ऋषि दयानन्द जी का भाष्य सर्वश्रेष्ठ है । उनके बाद उनके अनेक शिष्यों व अनुयायियों ने वेदों पर भाष्य किये हैं । कुछ नाम हैं पं. हरिशरण सिद्धान्तालंकार, पं. जयदेव विद्यालंकार, पं. आर्यमुनि, स्वामी ब्रह्ममुनि, पं. विश्वनाथ विद्यालंकार, पं. क्षेमकरण दास त्रिवेदी, आचार्य डा. रामनाथ वेदालंकार, स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती आदि । स्वामी दयानन्द जी के अनेक शिष्यों ने वेदों पर उच्च कोटि के ग्रन्थ लिखे हैं जो स्वामी दयानन्द जीके काल में उपलब्ध नहीं होते थे । अतः स्वामी दयानन्द जी के अनेक शिष्यों ने वेदों पर उच्च कोटि के ग्रन्थ लिखे हैं जो स्वामी दयानन्द जी के काल में उपलब्ध नहीं होते थे । अतः स्वामी दयानन्द जी के काल में उपलब्ध नहीं होते थे । अतः स्वामी दयानन्द जी की वेदों को जो देन है उसे उनके जीवन व व्यक्तित्व का सर्वोत्कृष्ट गुम कह सकते हैं । यह सब कार्य एक सफल योग साधक होने के फलस्वरूप ही सम्पन्न कर सके थे । वेदों का हिन्दी में भी भाष्य व भाषार्थ करना तो उनकी ऐसी सूझ थी जिसके लिए उनकी जितनी भी प्रशंसा की जाये उतनी ही कम है । इससे पूर्व ऐसा विचार शायद किसी के मस्तिष्क में नहीं आया कि हिन्दी में भी वेदों का भाष्य किया जा सकता । उनके इस कार्य से सहस्रों व लाखों संस्कृत न जानने वाले भी वेदों के ज्ञान व तात्पर्य से परिचित हुए हैं । हम भी उनमें से एक हैं ।

योग के क्षेत्र में स्वामी दयानन्द जी की एक प्रमुख देन हमें उनकी सन्ध्या पद्धति प्रतीत होती हैं । सन्ध्या भी ध्यान व समाधि प्राप्त कराने में साधन रूप एक प्रकार का योग का ही ग्रन्थ है । सन्ध्या के सफल होने पर साधन ईश्र का साक्षात्कार कर सकता है । यदि ईश्वर साक्षात्कार न भी हो तब भी योग के सात संगों को तो वह प्राप्त करता ही है । सन्ध्या का प्रयोगकर्ता वा साधक सन्ध्या से समाधि को या तो प्राप्त कर लेता है या कुछ दूरी पर रहता है । ऋषि दयानन्द की प्रेरणा व आन्दोलन के फलस्वरूप आज विश्व के करोड़ों लोग उनकी लिखी विधि से प्रातः व सायं सन्ध्या वा सम्यक् ध्यान करते हैं । सन्ध्या में अघमर्षण, मनसा-परिक्रमा, उपस्थान, समर्पण आदि मन्त्रों का विशेष महत्व प्रतीत होता है । अघमर्षण के मन्त्रों से पाप न करने वा पाप छोड़ने की प्रेरणा सन्ध्या करने वाले साधक को मिलती है । मनसापरि्करमा के मन्त्रों से भक्त व साधक ईश्वर को सभी दिशाओं में विद्यमान वा उपस्थित पाता है जो उसे हर क्षण हर पल देख रहा है । ईश्वर की दृष्टि हम पर हर पल व हर क्षण 24x7 रहती है । हम ऐसा कोई कार्य कर नहीं सकते जो ईश्वर की दृष्टि में न आये । अतः हमें अपने शुभ व अशुभ सभी कर्मों के फल अवश्यमेव भोगने होते हैं । अशुभ कर्मों का फल दुःख होता है । यह हमें कर्म के परिमाण के अनुसार ही मिलता है । जैसा व जितना शुभ व अशुभ कर्म होगा उसका वैसा व उतना ही सुख व दुःख रूपी परिणाम व परिमाण होगा । **अतः सन्ध्या का साधक पाप करना छोड़ देता है । यह भी सन्ध्या की एक बहुत बड़ी उपलब्धि है जबकि अन्य मतों में प्रायः ऐसा नहीं होता** । उपस्थान मन्त्र में हम ईश्वर को अपने समीप व आत्मा के भीतर अनुभव करने का प्रयास करते हैं और विचार करने पर यह सत्य सिद्ध होता है कि ईश्वर सर्वव्यापक होने से हमारे बाहर व भीतर दोनों स्थानों पर है । इसमें हम ईश्वर के गुणों वर्णन करते हैं और उससे स्वस्थ शरीर, बलवान इन्द्रिय शक्ति और सौ व अधिक वर्षों की आयु मांगते हैं । गायत्री मन्त्र बोल कर हम ईश्वर से बुद्धि की पवित्रता व उसे सन्मार्ग में चलने की प्रेरणा करने की प्रार्थना करते हैं । समर्पण मन्त्र बोलकर हम ईश्वर से धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को आज व अभी प्रदान करने की प्रार्थना करते हैं । ईश्वर को नमन के साथ हमारी सन्ध्या समाप्त होती है । वेदों का स्वाध्याय भी सन्ध्या का अनिवार्य अंग है । सभी वैदिक धर्मी अनुयायी वेदों का स्वाध्याय करते हैं जिससे वह अन्धविश्वास, मिथ्या ज्ञान व दुर्गुणों से बचते हैं । **वैदिक सन्ध्या भी ऋषि दयानन्द की मानव मात्र को बहुत बड़ी देन है** । यह बात अलग है कि कोई मनुष्य मत-मतान्तरों की अविद्या के कारण उसे ग्रहण करे या न करे । जो करता है वह अपना लाभ करता है और जो नहीं करता वह अपनी हानि करता है ।

स्वामी दयानन्द जी सच्चे योगी एवं वेदर्षि थे । वह ईश्वरभक्त, वेदभक्त, देशभक्त, मातृ-पितृभक्त, आचार्य व गुरुभक्त, देश व समाज के हितैषी, देश के स्वर्णिम भविष्य के स्वप्नद्रष्टा, सच्चे समाज सुधारक, अविद्या व अन्धविश्वास निवारक, देशवासियों को सत्यपथानुगामी बनाने वाले, सामाजिक असमानता को दूर करने वाले, सबको वेदाधिकार दिलाने वाले, समाज से छुआछूत व ऊंच-नीच के भेदभाव को दूर करने वाले, दलितों व ब्राह्मण आदि सभी को वेद पढ़कर उच्च कोटि का विद्वान व योगी बनने की प्रेरणा करने व अधिकार दिलाने वाले इतिहास के अपूर्व आदर्श महापुरुष थे । उन्होंने हमें सत्यार्थप्रकाश, ऋगवेदादिभाष्य भूमिका, संस्कार विधि, आर्याभिविनय आदि अनेक दिव्य ज्ञान के ग्रन्थ प्रदान किये हैं । इनके कारण हम संसार में आज भी विश्व गुरु हैं । स्वामी दयानन्द के कारण मत-मतान्तरों के आचार्यों को उनके मतों व ग्रन्थों के अविद्यायुक्त होने का ज्ञान व अनुभव हुआ है । कोई न तो वैदिक सिद्धान्तों का खण्डन करता है और न आर्य समाज के विद्वानों से किसी विषय पर शास्त्रार्थ के लिए तत्पर होता है । लेख को विराम देने से पूर्व हम यह कहना चाहते हैं कि स्वामी दयानन्द जी जैसा ब्रह्मचारी, योगी व वेदज्ञानी महाभारतकाल के बाद दूसरा नहीं हुआ । हम उनको नमन करते हैं । ओ३म ! शम् ।

शिक्षा और नैतिकता पर वैदिक चिन्तन: आधुनिक सन्दर्भ में

-आचार्य सोमेन्द्र श्री

आधुनिक संदर्भ में प्रस्तुत विषय की नितान्त आवश्यकता है। शिक्षा में नैतिकता के बिना मानवीय मूल्यों का ह्रास दिन-प्रतिदिन दिखाई दे रहा है। शिक्षा का मात्र उद्देश्य रोजी रोटी और व्यवसाय प्राप्त करना ही न होकर बालक का सर्वांगीण विकास करना है। शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक विकास से ही सर्वोन्नति संभव है। शिक्षा का उद्देश्य है- **'सा विद्या या विमुक्तये'** अर्थात विद्या वह है, जो हमें सब प्रकार के दुःखों से विमुक्ति दिलवाए। इसलिए ऋग्वेद का ऋषि कहता है- 'मनुर्भव' मनुष्य बनो। मानवीय गुणों-प्रेम, दया, सहानुभूति, त्याग, सेवा, परस्पर सहयोग भावना, उत्तमोत्तम आचरण, शिक्षा, विद्या इत्यादि शुभ श्रेष्ठ गुणों द्वारा ही मनुष्य का निर्माण सम्भव है। इसी के द्वारा समाज एवं राष्ट्र को भी मंगलमय बनाया जा सकता है। शिक्षा का वैदिक आदर्श है- **सहनाववतु सह नौ भुनक्तु सह वीर्य करवावहै। तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै।** इस मन्त्र में शिक्षा के पाँच उद्देश्य बताये हैं- शारीरिक विकास, जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति, सबका विकास, धर्म संस्कृति सभ्यता के प्रति उदात्त भावना, द्वेष भावना के स्थान पर गुरु शिष्य का आपसी सहयोग। इसी उद्देश्य को सामने रखकर शिक्षा के उद्देश्य को सामने रखकर शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है। ज्ञान, भक्ति और निष्काम कर्म शिक्षा के मूल तत्व हैं। यम और नियम के द्वारा भी समानता व एकरूपता की प्राप्ति की जा सकती है। वेद के उदात्त विचारधारा द्वारा विश्वबन्धुत्व, विश्वशान्ति, समष्टिभावना, भद्रभावना, आशावाद, निर्भयता, श्रद्धा सामंजस्य को प्राप्त किया जा सकता है। शिक्षा का वैदिक नैतिक रूप इस वाक्य में दिग्दर्शित किया गया है- **''मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद''** जब तीन उत्तम माता-पिता और आचार्यगण होते हैं, तभी मनुष्य ज्ञानवान बनता है। वैदिक वाङ्मय की उन्नति में राजा राम मोहनराय द्वारा स्थापित ''ब्रह्मसमाज'' और स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित ''आर्य समाज'' ने विशेष सक्रिय कार्य किया है। ब्रह्मसमाज का ध्यान भारतीय-गौरव रक्षा के लिए उपनिषदों की ओर रहा है और आर्य समाज ने वैदिक साहित्य पर बल दिया। यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि आधुनिक समय में वैदिक साहित्य एवं शिक्षा पर जो कुछ कार्य हुआ है उसमें आर्य समाज का स्थान अग्रगण्य है।

शिक्षा के ध्येय एवं उद्देश्य के विषय में विचार करते समय हम निःशन्देह यह कह सकते हैं कि अन्तःशक्तियों को समुचित रूप में विकसित कर देना ही शिक्षा का प्रथम एवं अन्तिम ध्येय है। इसी आदर्श को हृदयंगम कर वैदिक ऋषि अपनी शक्तियों के विकास के लिए परमात्मा से प्रातः सायं इस प्रकार से प्रार्थना किया करते थे- ईश्वर ! हमारी बुद्धि को सद्मार्ग में प्रेरित करो- **''धियो यो नः प्रचोदयात्''** हे अग्निदेव ! हमें आप सद्मार्ग से विश्व में ले चले, ले ही न चले, अपितु आप हमारे हृदयों से दुर्गुण एवं पाप भावनाओं को निकालकर निष्पाप तथा शुद्ध पवित्र बुद्धि प्रदान करें, इसके लिए हम पुनः आपकी प्रार्थना करते हैं-

अग्नेनय सुपथा राये अस्मान्विश्वानि देव वयुनानिविद्वान्। युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्ति विधेम॥

वैदिक ऋषि पवित्र भावभूमि पर स्थित होकर पुनः बुद्धि को मेधावी बनाने के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता है-

यां मेधां देवगणां पितरश्चोपासते
तया मामध्य नेधाविनं कुरु।

इस प्रकार बुद्धि को मेधावी बनाने के लिए ही प्रार्थनाएं नहीं की जाती थीं, अपितु उस बुद्धि को पवित्र एवं कालुष्य रहित बनाने के लिए भी

पुनन्तु मां देवजना पुनन्तु मनासाधियः पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेद पुनीहि मा॥

इस प्रकार वैदिक शिक्षा का मूल आधार मानव की बुद्धि का परिष्कार कर सुपथ का दर्शन कराना था; वस्तुत) यही प्राचीन शिक्षा का ध्येय था। क्या आज की शिक्षा में कहीं भी इस प्रकार का पाठ्यक्रम निर्धारित है जो बुद्धि को मानवता के मार्ग का पथिक बना सके जिससे कि हम उंच्च स्वर से आयु, प्राण, धन, तेज को प्राप्त करने के लिए प्रार्थना करना न भूलें-

तेजोऽसि तेजोमयि धेहि
वीर्यमसि वीर्यमयि धेहि
वलमऽसिबलं मयि धेहि
महोऽसि सहोमयि धेहि

प्राचीन काल में 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' के अनुसार विश्व की कल्याण कामना ही वैदिक संस्कृति का प्रयोजन था। उसी सिद्धि के लिए ऐहिक एवं पारलौकिक उन्नति करते हुए ब्रह्म के स्वरूप में भारतीय निमग्न हो जाते थे। वह ब्रह्मत तप से प्राप्त होता था- **'ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते', 'तपसा चीयते ब्रह्म'** तथा तप की कसौटी के रूप में यम-नियमों का पालन करने के लिए एक निर्देश प्रत्येक विद्यार्थी को तो दिया जाता था; साथ ही मानव मात्र को इनका पालन रना आवश्यक था। यम के अन्तर्गत-

''तत्राऽहिंसा सत्यास्तेय ब्रह्मचर्यापरिग्रहा यमः'', तथा नियमों में **''शौच सन्तोषस्तपः स्वाध्यायेश्वर प्राणिधानानि नियमाः''** अर्थात् अहिंसा, सत्य अस्तेय, ब्रह्मचर्य अपरिग्रह तथा मन, वचन, कर्म में पवित्रता शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्व प्राणिधान। इन यम एवं नियमों की उपयोगिता, महत्व एवं अनिवार्यता के विषय में कुछ कहना उचित न होगा, वस्तुतः ये मानव को पूर्ण मानव बनाने के साधन थे। इनका आज के छात्र समाज में पूर्णतः अभाव-सा ही दृष्टिगोचर हो रहा है। जिस ब्रह्मचर्य का पालन कर देवताओं ने इच्छा मृत्यु प्राप्त की थी, उसका भी घवल यश वैदिक साहित्य में गाया गया है-

''ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युपाध्नतः मरणं बिन्दु पातेन जीवनं बिन्दु धारणातड्।''

चरित्र की भी प्रशंसा की गई है कि चरित्र से रहित मनुष्य मृतप्रायः ही है-

'अक्षीणो वित्ततः वृत्ततस्तु हतो हतः'

इस प्रकार प्राचीन निर्देशों के अनुसार हम कह सकते हैं कि प्राचीन छात्र व्रती एवं तपस्वी बनकर सिक्षोपार्जन किया करते थे।

प्राचीन काल की शिक्षा में मूल श्रद्धा की भावना थी; किन्तु आज के छात्र समाज में उसका पूर्णतः अभाव है। वस्तुतः मानव जीवन की सफलता के लिए विभिन्न तत्वों में श्रद्धा का प्रधानतम स्वार्थ है। श्रद्धा से समस्त कार्य अनायास ही सम्पन्न हो जाते है। श्रद्धा की भावना अपने गुरुजनों को वश में करने का सर्व-सुलभ साधन है-

श्रद्धायाग्निः समिध्यते श्रद्धया हूयते हविः।
श्रद्धा भगस्य मूर्धनि वचसावेदयामसि ॥

श्रद्धा भावना जब ऐश्वर्य तथा कल्याण की प्रदाता है तो क्या आज के छात्रों में श्रद्धा की भावना संचार होने पर गुरु प्रदत्त शिक्षा जीवनोपयोगी नहीं हो सकती है ? अवश्य हो सकती है। आज शिक्षा के क्षेत्र में फैली विश्रृंखलता के कारण छात्रों में श्रद्धा का अभाव है। वस्तुतः श्रद्धा ज्ञानार्जन का मूलमन्त्र है, जिस श्रद्धा की भावना ने नचिकेता में यम के मुख में जाकर प्रश्न करने के साहस का संचार किया था। ज्ञानार्जन करने में नचिकेता को समर्थ बनाया था। क्या वही श्रद्धा आज की शिक्षा में जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन नहीं करा सकती। संसार में श्रद्धाहीन मानव सदा से पददलित होते आए हैं। उनका सदा विनाश हो रहा है आज विनाश से बचने के लिए छात्र समाज को श्रद्धालु बनाने का उपाय करना चाहिए। लेकिन हम देखते क्या हैं आज का छात्र, माता, पिता एवं गुरुजनों के प्रति पूर्णतः अवज्ञा की भावना को लिए सदैव तिरस्कृत-सा करता है। यही कारण है कि उन्हीं गुरुजनों से प्रदत्त शिक्षा छात्र के लिए अभिशाप बनकर दुःखदायी ही सिद्ध हो रही है। अतः छात्रों को तपानुष्ठान का आचरण का श्रद्धाशील बनाना चाहिए। वेद के शब्दों में वह व्रतपालन से ही सम्भव है-

व्रतेन दीक्षामाप्रोति दीक्षामाप्रोति दक्षिणामड्।
दक्षिणाश्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ॥

अर्थात् व्रत से दीक्षा, दीक्षा से दक्षिणा, दक्षिणा से श्रद्धा, श्रद्धा से सत्य। इस प्रकार क्रमशः मानव को सुपथ पर ले जाने के लिये यह एक पद्धति वेद में निर्दिष्ट है। इसका पालन कल्याण की कामना करने वाले के लिए आवश्यक है।

विद्या स्वयं ही दुष्टाचरण कर्ताओं से भयभीत रहती है अतः उनके पास जाकर भी उनका कल्याण न कर अहित साधन ही करती है। इस सम्बन्ध में निरुक्त के ये वचन दृष्टव्य हैं-

विद्या आचार्य से कहती हैं-हे आचार्य ! मेरी रक्षा करो, मैं तुम्हारी शरण हूं। ईर्ष्यालु, कुटिल एवं दुराचारी को मेरा दान न करो-

विद्याह वै ब्राह्मणमाजगाम गोपाय मा सेवधिष्टेऽहमस्मि,।
असूयकायनृजवेऽयताय न मा ब्रूया वीर्यमती यथा स्याम् ॥

विद्या, पवित्र शुद्धाचरण कर्ता मेधावी ब्रह्मचारी को अपनी कृपा से अनुग्रहीत करती है-

अध्यापिता ये गरूं नाद्रियन्ते विप्र वाचा मनसा कर्मणा।
यथैव ते द गुरोर्भोजतीयास्तथैव तान्नभुनक्ति श्रुतंतत् ॥

विद्या पवित्र शुद्धाचरण कर्ता मेधावी ब्रह्मचारी को अपनी कृपा से अनुग्रहीत करती है-

यमेव विद्या शुचिमप्तमन्तं मेधाविनं ब्रह्मचर्योपसन्नम्।
यस्ते न दुह्योत्कृतमच्चनाह तस्मै मा ब्रूया निधिपाय ब्रह्मन्निति निधि शेबधिरिति ॥

भगवान मनु का यह वचन भी दर्शनीय है-

उत्पादक ब्रह्म दात्रोर्गरीन्ब्रह्मदः पिताः।
ब्रह्मजन्म हि विप्रस्य प्रेत्य चेह व शाश्वतम्।

उत्पादक पिता की उपेक्षा आचार्य अधिक महत्व का भागी होता है क्योंकि उत्पादक पिता ने तो केवल एक जन्म प्रदान किया है। किन्तु इस भव सागर से संतरण करने के लिए आचार्य हीमानव का पूर्ण व पवित्र निर्माण करता है। योगदर्शन में पंचक्लेशों को अर्थात् दुःखों का वर्णन मिलता है जिनमें अविद्या का परिगणन सर्वप्रथम किया गया है- **''अविद्याऽष्मिता रागद्वेषाभिनिवेषा पञ्चक्लेशा''** वस्तुतः अविद्या मानव को पतन के गर्त में ले जाकर यथासम्भव दुःखों से पड़ित करती है। अतः इन दुःखों से पीड़ित करती है। अतः इन दुःखों से यदि मुक्ति प्राप्त करनी है तो ज्ञानार्जन करना चाहिए क्योंकि **''ऋते ज्ञानान्न मुक्ति''** ज्ञान की प्रापित का एकमात्र साधन शिक्षा सम्बन्धि भारतीय विचारधारा का अनुपालन ही है। क्योंकि विद्या पात्रापात्र का विचार कर ही अनुग्रह करती है।

अतः यह निशिचत रूप से कहा जा सकता है कि शिक्षा का पूर्ण विकास राष्ट्र की संस्कृति के आधार पर ही हो सकता है क्योंकि उसकी पृष्ठभूमि में अपने देश के आदर्शो का वरदहस्त रहता है। जिस प्रकार एक पौधा अपने अनुकूल जलवायु पर एवं मिट्टी से पृथक् हो, अन्य भूमि पर विकसित नहीं हो सकता है उसी प्रकार किसी राष्ट्र की शिक्षा पद्धति अपनी संस्कृति की आधारशिला का परित्याग कर उन्नति नहीं कर सकती है। वैदिक काल की शिक्षा का पूर्ण विकास इसी पृष्ठभूमि पर हुआ है।

शिला के आधुनिक सन्दर्भ में वैदिक शिक्षाकालीन सूत्रों की प्रासंगिकता आज भी अधिक बढ़ जाती है।क्योंकि आज की शिक्षा प्रणाली में केवल मात्र जीविकोपार्जन की दृष्टि को ही महत्व दिया जाने लगा है। शिक्षा का यथार्थ उद्देश्य मानव को सर्वांगीण विकास की अवहेलना स्पष्ट परिलक्षित होती है। शिक्षा में नैतिकता का संपुट अवश्य दिया जाना चाहिए। प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री डॉ. राधाकृष्णन् के अनुसार-भारतसहित सारे संसार के कष्टों का कारण यह है कि शिक्षा का सम्बन्ध नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की प्राप्ति से न रहकर केवल मस्तिष्क के विकास से रह गया है, जिस शिक्षा में हृदय, मन और आत्मा की अवहेलना है उसे पूर्ण नहीं माना जा सकता, इन शब्दों पर सभी शिक्षाशास्त्रियों को गम्भीरता से विचार करना चाहिए। प्रस्तुत विषय की प्रासंगिकता नितान्त अनिवार्य है। इस पर गम्भीरता से सभी शिक्षाशास्त्रियों को विचार-विमर्श करना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

१) संस्कृत साहित्य का इतिहास-डॉ. बलदेव उपाध्याय।

२) वैदिक साहित्य का इतिहास - डॉ. राजकिशोर सिंह

३) वैदिक वाग् ज्योति - शोधपत्रिका गुरुकुल कांगड़ी जुलाई-दिसम्बर २०१६

४) प्रज्ञा शिक्षण शोध रचना - शोध पत्रिका, अमरोहा।

५) संस्कृत साहित्य का इतिहास - डॉ. कपिलदेव द्विवेदी।

वेदों में विज्ञान के उद्घोषकः ऋषि दयानन्द

-वेदमार्तण्ड प्रो. डॉ. महावीर मीमांसक

वेदों में भौतिक विज्ञान का उद्घोष ऋषि दयानन्द की अत्याधुनिक आर्ष दृष्टि का प्रमाण है। यह २१वीं सदी विज्ञान की सदी घोषित हो चुकी है। इस सदी में विज्ञान के अत्यन्त चामत्कारिक आविष्कार विश्व के समक्ष आ चुके हैं तथा अभी और भी अनेक आविष्कार होने है। कम्प्यूटर और इन्टरनेट की खोज आज के भौतिक विज्ञान का उत्कृष्ट चमत्कार है। क्लोन बेबी का आविष्कार विज्ञान का एक अद्भुत नमूना ही। रोबोट अनेक क्षेत्रों में मनुष्य का स्थान ले रहा है। ऋषि दयानन्द की आर्ष-दृष्टि से यह ओझल नहीं था। भौतिक विज्ञान विश्व में आंधी की तरह फैल रहा है और आधुनिक मनुष्य उसमें उड़ा जा रहा है। जितना भौतिक विज्ञान बढ़ रहा है, धार्मिक साम्प्रदायिक अन्धविश्वासों की जंजीर उतनी ही ढीली होती जा रही है। विज्ञानवाद के सामने साम्प्रदायिक अन्धविश्वासों को बनाये रखना धार्मिक (साम्प्रदायिक) गुरुओं के लिये कठिन होता जा रहा है, उनकी गद्दी बचाये रखने के लिये आज का भौतिक विज्ञान एक बहुत बड़ा अपरिहार्य खतरा और चैलेन्ज बन गया है।

किन्तु ऋषि दयानन्द की यह स्थापना थी कि विज्ञान और धर्म परस्पर विरोधी नहीं हैं अपितु एक दूसरे के पूरक हैं और धर्म का आधार विज्ञान अर्थात् प्राकृतिक नियम, युक्ति और तर्क ही हैं। धर्म वही टिक सकेगा जो विज्ञान को साथ लेकर चले। इसलिये उन्होंने वेद में भौतिक विज्ञान की घोषणा की। केवल घोषणा ही नहीं अपितु वेद के मन्त्रों के आधार पर उन्होंने भौतिक विज्ञान के ऐसे नमूने प्रस्तुत किये कि जिनका आविष्कार उस समय तक नहीं हुआ था। सृष्टि के प्रारम्भ में प्राणी जगत् बिना मैथुन (अमैथुनी सृष्टि) के पैदा हुआ, ऋषि दयानन्द का यह उद्घोष आज के विज्ञान से क्लोन बेबी के आविष्कार से पुष्ट हो चुका है। पृथ्वी के अतिरिक्त अन्य ग्रहों पर भी जीवन है, यह तथ्य आज के विज्ञान, नासा की खोज के द्वारा पुष्ट हो गया है, जिसे ऋषि दयानन्द ने शतपथ ब्राह्मण का. १४ ''एते हीदं सर्वं वासयन्ते'' इत्यादि के आधार पर सत्यार्थ प्रकाश के ८वें समुल्लास में सन् १८७५ में ही लिख दिया था। प्रलय में काल की सत्ता और प्रलयकाल की अवधि आज के सृष्टिविज्ञान वेत्ता स्टीफन्स हाकिन्स ने अब सिद्ध की है जिसे महर्षि दयानन्द ने अपने ''ऋगवेदादिभाष्य भूमिका'' में १३५ वर्ष पहले लिख दिया था और जिसे अथर्ववेद के का. १९, सू. ५३, ५४ में लाखों वर्ष पहले बड़े विस्तार से कालविषयक सूक्त में निरूपित कर दिया था, तथा जिस काल का विशद विवेचन भारतीय ज्योतिष शास्त्रों में हजारों वर्ष पहले भारतीय ऋषि कर चुके थे और जो कालगणना भारत की विवाह संस्कार आदि की संस्कार परम्पराओं में सुरक्षित रखी जाती हुई ऋत्विक, पुरोहित आदि द्वारा निरन्तर अतत पढ़ी जाती रही। विज्ञान की आधुनिकतम खोज गोल्ड बोसेन द्वारा गोड्ज पार्टिकल (**Gods particle**) को भारत के हजारों वर्ष पुराने वैशेषिक दर्शन के परमाणुवाद, कपिल मुनि के सांख्य दर्शन के प्रकृतिवाद और ऋग्वेद के नासदीय सूक्त (मं. १०, सू. १२९) में खोजा जा सकता है। ऋषि दयानन्द से भी हजारों वर्ष पहले यास्काचार्य ने भी अपने निरुक्तशास्त्र में वेदों में भौतिक विज्ञान का उद्घोष कर दिया था। सूर्य पर जीवन आधारित है-यह तथ्य बतलाते हुए यास्काचार्य ने वैदिक शब्द 'असुर' की निर्वचनीय व्याख्या 'असून प्राणान् राति ददातीत्यसुरः' (सूर्य में ही प्राणदायक जीवनदायक शक्ति है) ऋग्वेदीय मन्त्र ''असुरत्वमेकम्'' में सूर्य का विशेषण 'असूर' के प्रयोग में की। आज स्टीफन्स हाकिन्स कहता है कि धरती पर जीवन तब तक है जब तक सूर्य की सत्ता है, यास्काचार्य ने यह चेतावनी हजारों वर्ष पहले ही दे दी थी। इसी लिये प्रश्नोपनिषद् का ऋषि पिम्पलाद कहता है कि आदित्य सब प्राणों को अपनी रश्मियों में धारण करता है (यत् सर्वं प्रकाशयति तेन सर्वान् प्राणान् रश्मिषु सन्निधते-प्रश्नोपनिषद् १.६)। सौर ऊर्जा (सोलर एनर्जी) यजुर्वेद के 'इषे त्वोर्जे त्वा. (अ.१.मं.१) में सविता (सूर्य में ऊर्जा के ज्ञापन द्वारा बतला दी। वेद में ''वैश्वानर'' शब्द की व्याख्या द्वारा हजारों वर्ष पहले यास्क आचार्य ने अपने निरुक्त शास्त्र में वैज्ञानिक पद्धति के परीक्षणात्मक प्रयोग द्वारा यह सिद्ध कर दिया था कि सूर्य ही अग्नि का मूल स्रोत है और भूमि की अग्नि सूर्य के कारण ही है, जिस तथ्य को स्टीफन्स हाकिन्स आज कह रहे हैं।

वैदिक विज्ञान से अनभिज्ञ लोग कह देते हैं कि जब आज का वैज्ञानिक कोई आविष्कार कर देता है तो वैदिक विद्वान कहने लगते है कि यह तो वेद मे विद्यमान है। क्या यो ऊपर दर्शाये गये ये वैदिक विज्ञापन के नमूने आधुनिक आविष्कारों के बाद के है ? मूर्ख लोगों की आंख अभी भी नहीं खुलें तो कभी भी नहीं खुलेंगी।

ऋषि दयानन्द ने यास्काचार्य द्वारा प्रदर्शित वेदभाष्य की यौगिक (योगरूढ़) पद्धति के आधार पर ही अपना वेद भाष्य किया। ऋषि दयानन्द ने अपनी पुस्तक ''ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका'' के 'वेदविषयविचार' के प्रसंग में तथा अपने वेद भाष्य में अग्नि, वायु, जल आदि देवता वाले मन्त्रों में यथास्थान भौतिक विज्ञान को ही उजागर किया, जिसके लिये यास्क ने निरुक्त में कहा था, ''तिस्र एव देवता, अग्निःपृथ्वीस्थानीयः, वायुर्वेन्द्रो वाऽन्तरिक्षस्थानीयः सूर्योद्युरस्थानीयः''।

आधुनिक मानव और विशेषतः आज का नवयुवक आधुनिक भौतिक-विज्ञान पर फिदा है और बात है भी सही। एक मुस्लिम युवक यदि कुरान शरीफ में सृष्टि निर्माण की व्याख्या पढ़ेगा कि खुदा ने कुन कहा और सृष्टि बन गई। तथा वही युवक विद्यालय या महाविद्यालय में विज्ञान की पुस्तकों में सृष्टि की उत्तपत्ति विज्ञान के आधार पर पढ़ेगा तो वह कुरआन शरीफ को ताक पर रख देगा। इसी प्रकार एक क्रिश्चियन नवयुवक बाइबिल में सृष्टि रचना के सम्बन्ध में पढ़ेगा कि ईश्वर (गॉड) ने ६ दिन तक सृष्टि रचना इससे भिन्न प्रकार से पढ़ेगा तो उस का विश्वास बाइबिल पर से उठ जायेगा। यही स्थिति एक पुराण पाठक छात्र के साथ भी होगी। किन्तु एक वैदिक

शेष ११ पेज पर

सत्यार्थ प्रकाश के १२वें समुल्लास में से चुने हुए अनमोल वचन

-भावेश मेरजा

सत्यार्थ प्रकाश आर्य समाज के प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती का जगप्रसिद्ध ग्रन्थ है। पूर्वार्ध में वैदिकधर्म से सम्बन्धित अनेक विषयों का प्रतिपादन किया गया है। उत्तरार्ध में चार समुल्लास हैं। उत्तरार्ध के इन समुल्लासों में आर्यावर्त्तीय मत-सम्प्रदायों, चार्वाक-बौद्ध-जैन मतों, ईसाई तथा मुसलमानों के मत की क्रमशः उनके मान्य प्रमुख ग्रन्थों के आधार पर समालोचना की गई है। ग्रन्थ की मुख्य भूमिका, उत्तरार्ध के चारों समुल्लासों की अनुभूमिकाओं तथा ग्रन्थ के अन्त में लिखे गए स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश प्रकरण में महर्षि ने इस ग्रन्थ का प्रयोजन सत्यान्वेषण के द्वारा ऐक्य निर्माण कर मानव जाति की उन्नति करना है यह भलीभाँति दर्शाया है। इन मत-मजहबों की समीक्षा प्रस्तुत करने से पूर्व ग्रन्थ के पूर्वार्ध के अन्त में महर्षि ने अपने पाठक वृन्द से यह आशा व्यक्त की है कि वे इस ग्रन्थ के उत्तरार्ध में की गई समालोचनाओं को न्याय दृष्टि से देखेंगे और इनमें किए गए स्थूल तथा सूक्ष्म खण्डनों के अभिप्राय को ठीक से समझेंगे। ग्रन्थ का १२वां समुल्लास चार्वाक, बौद्ध और जैन मतों के विषय में है, जिसमें इन मतों के मान्य ग्रन्थों के अनेक वचनों को उद्धृत कर उन पर महर्षि ने अपनी 'समीक्षा' प्रकाशित की है। उत्तरार्ध के ये चारों समुल्लास मुख्यतः खण्डन-मण्डन परक होने से देखा गया है कि कई बार कुछ पाठक इन समुल्लासों में विद्यमान् कई अति महत्वपूर्ण सैद्धान्तिक बातों एवं सच्चाइयों की ओर सम्यक् ध्यान नहीं दे पाते हैं। प्रस्तुत लेख में १२वें समुल्लास से संकलित की गई ऐसी कुछ चुनी हुई सच्चाईयाँ तथा सिद्धान्त वाक्य पाठकों के स्वाध्याय तथा चिन्तन हेतु प्रस्तुत किए जाते हैं।

१) द्वेष ही पाप का मूल है।

२) जिसका मत सत्य है, उसको किसी से डर नहीं होता।

३) जो जैसा मनुष्य होता है, वह प्रायः अपने ही सदृश दूसरों को समजता है।

४) स्वर्ग सुख-भोग और नरक दुःख-भोग का नाम है।

५) सबसे प्रीतिपूर्वक परोपकारार्थ वर्त्तना शुभ चरित्र कहाता है।

६) सब मतों की मूर्तिपूजा व्यर्थ है।

७) वेदों में कही मांस का खाना नहीं लिखा।

८) सबके सामने नंगी मूर्तियों का रहना और रखना पशुवत् लीला है।

९) 'चारवाक' शब्द का अर्थ - जो बोलने में 'प्रगल्भ' और विशेपार्थ 'वैतण्डिक' होता है।

१०) अपने घर वालों ही की सेवा करना विशेष धर्म नहीं कहाता।

११) जो नित्य पदार्थ हैं, उनके गुण-कर्म-स्वभाव भी नित्य होते हैं।

१२) जो द्रष्टा है, यह द्रष्टा ही रहता है, दृश्य कभी नहीं होता।

१३) जो ईश्वर क्रियावान् न होता, तो इस जगत् को कैसे बना सकता?

१४) ऐश्वरी सृष्टि का ईश्वर कर्त्ता है, जैवी सृष्टि का नहीं।

१५) जो जीवों के कर्त्तव्य कर्म हैं, उनको ईश्वर नहीं करता किन्तु जीव ही करता है।

१६) पृथिव्यादि भूत जड़ हैं। उनसे चेतन की उत्पत्ति कभी नहीं हो सकती।

१७) जीव को कष्ट देना ही हिंसा कहाती है।

१८) धर्माऽधर्म द्रव्य नहीं किन्तु गुण हैं।

१९) पीड़ा दिये बिना किसी जीव का किञ्चित् भी निर्वाह नहीं हो सकता।

२०) रोग की अधिकता और बुद्धि के स्वल्प होने से धर्मानुष्ठान की बाधा होती है।

२१) जहाँ अटकाव, प्रीति और अप्रीति है, उसको 'मुक्ति' क्यों कर कह सकते हैं?

२२) बिना वेदों के यथार्थ अर्थ-बोध के मुक्ति के स्वरूप को कभी नहीं जान सकते।

२३) सज्जन पुरुष सज्जनों के साथ प्रेम और दुष्टों को शिक्षा देकर सुशिक्षित करते हैं।

२४) सब प्राणियों के दुःख-नाश और सुख की प्राप्ति का उपाय करना 'दया' कहाती है।

२५) पशु मार के होम करना वेदादि सत्य शास्त्रों में कहीं नहीं लिखा।

२६) जो अविद्यादि दोपों से छूटना चाहो, तो वेदादि सत्य शास्त्रों का आश्रय लेओ।

२७) जो संयोग से उत्पन्न होता है, वह अनादि और अनन्त कभी नहीं हो सकता।

२८) परमात्मा अनाद्यनन्त (अनादि, अनन्त), सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, पवित्र, ज्ञान-स्वरूप है।

२९) जल छान के पीना और सूक्ष्म जीवों पर नाम मात्र दया करना, रात्रि को भोजन न करना- ये तीन बातें अच्छी हैं।

३०) जिसका प्रदेश होता है, वह विभु नहीं, जो विभु नहीं, वह सर्वज्ञ, केवल-ज्ञानी कभी, नहीं हो सकता। क्योंकि जिसका आत्मा एकदेशी है वही जाता-आता है और बद्ध, मुक्त, ज्ञानी, अज्ञानी होता है। सर्वव्यापी, सर्वज्ञ वैसा कभी नहीं हो सकता।

३१) जो पृथिवी न घूमे और सूर्य पृथिवी के चारों और घूमे, तो कई वर्षों का दिन और रात होवे।

३२) आप लोगों का बड़ा भाग्य है कि वेदमतानुयायी सूर्यसिद्धान्तादि ज्योतिष

ग्रन्थों के अध्ययन से ठीक-ठीक भूगोल, खगोल विदित्त हुए ।

३३) सर्वथा सब जीवों पर दया करना भी दुःख का कारण होता है ।.. चोर डाकुओं को कोई भी दण्ड न देवे, तो कितना बड़ा पाप खड़ा हो जाये ? इसलिए दुष्टों को यथावत् दण्ड देने और श्रेष्ठों के पालन करने में दया और इसके विपरीत करने में दया-क्षमा रूप धर्म का नाश है ।

३४) जल, स्थल, वायु के स्थावर शरीर वाले अत्यन्त मूर्छित जीवों को दुःख वा सुख कभी नहीं पहुँच सकता ।

३५) जो अत्यन्त अन्धकार, महा-सुपुप्ति और महा-नशा में जीव हैं, इनको सुख-दुख की प्राप्ति मानना, .. भूल विदित होती है ।

३६) जब तुम सुषुप्ति में होते हो, तब तुमको सुख-दुःख प्राप्त क्यों नहीं होते ? सुख-दुःख की प्राप्ति का हेतु प्रसिद्ध सम्बन्ध है ।... नशा सुंधा के डॉक्टर लोग अंगों को चीरते, फाड़ते और काटते हैं । जैसे उनको दुःख विदित नहीं होता, इसी प्रकार अति मूर्छित जीवों को सुख-दुःख क्योंकर प्राप्त होवें ? क्योंकि वहाँ प्राप्ति होने का साधन कोई भी नहीं ।

३७) पीड़ा उसी जीव को पहुँचती है, जिसकी वृत्ति सब अवयवों के साथ विद्यमान हो । इसमें प्रमाण- **'पञ्चावयवयो गात्सुखसंवितिः।'**- यह सांख्य शास्त्र का सूत्र है । जब पाँचों इन्द्रियों का पाँच विषयों के साथ सम्बन्ध होता है, तभी सुख वा दुःख की प्राप्ति जीव को होती है । जैसे- बधिर को गाली प्रदान, अन्धे को रूप वा आगे से सर्प, व्याघ्रादि भयदायक जीवों का चला जाना, शून्य बहिरी वालों को स्पर्श, पिन्नस रोग वाले को गन्ध और शून्य जिह्वा वाले को रस प्राप्त नहीं हो सकता, इसी प्रकार उन (वायुकाय के) जीवों की भी व्यवस्था है ।

....पृष्ठ ९ का शेष

छात्र का विश्वास वेद पर और भी दृढ़ हो जायेगा जब वह सृष्टि रचना का प्रकार वेद में भी वही पढ़ेगा जो विज्ञान में वर्णित है । यहां तक कि आज के विज्ञान के इन्टरनेट और ग्लोबलाइजेशन (ग्लोबलाइजेशन) की अवधारणा वेद के मन्त्र ''यत्र विश्वंभवत्ये कनीडम्'' (वह मन्त्र जिस में समूचा विश्व एक घोसले जितने रूप में समा जाता है) में देखी जा सकती है । वेद इसीलिये अत्याधुनिक (अल्ट्रा माडर्न) और सार्वकालिक है ।

आधुनिक मानव और आज का युवक विज्ञान की बात करता है अतः सभी सम्प्रदाय विज्ञान से भयभीत हैं । जितना जितना विज्ञान बढ़ता है सभी सम्प्रदाय प्रभावहीन होते जा रहे हैं । केवल वैदिक धर्म ऐसा है जो विज्ञान का स्वागत करता है । अतः विज्ञान की बढ़त के साथ ही वैदिक धर्म दृढ़ और स्थायी होता जाता है । ऋषि दयानन्द का यही आर्ष दर्शन है । अतः आर्य बन्धुओ ! आप को आधुनिक विज्ञान से डरने की आवश्यकता नहीं है, आप उसका स्वागत कीजिये । ज्यों ज्यों विज्ञान बढ़ेगा, अन्य सम्प्रदाय स्वतः ही नीचे, (समाप्त) होते जायेंगे, केवल वैदिक धर्म का झण्डा ऊंचा जाता जायेगा ।

वैदिक विज्ञानवाद महर्षि दयानन्द की सुदीर्घ दूरदर्शिता है जो भारत तथा आर्य समाज को सदैव आधुनिक, प्रासंगिक और समसामयिक बनाये रखेगी । आधुनिक मस्तिष्क और विसेषतः आधुनिक युवक और नई पीढ़ी में आर्य समाज के प्रचार प्रसार का यह अमोघ अस्त्र है । अतः यह आवश्यक है कि वैदिक प्रचार और प्रसार के लिये वेद में विज्ञान के नये आविष्कार खोजे जायें, वैदिक अध्यात्मवाद और ''मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे'' की वैदिक भ्रातृभाव की भावना को फैलाया जाये तो आधुनिक सम्प्रदायवाद पर आधारित आतंकवाद का युक्तियुक्त सशक्त समाधान भी होगा और निश्चित रूप से आज का नवयुवक और नई पीढ़ी वेद तथा आर्य समाज की ओर आकर्षित होगी और वेद का 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का उद्घोष सार्थक होगा । आज के विज्ञान के युग में विश्व को भारत की प्राचीनतम अस्मिता का परिचय वेद के नाम/आधार पर ऋषि दयानन्द ही दे सकता है । विज्ञान, धर्म और अध्यात्म का समन्वय केवल वेद में ही अन्तर्निहित है जिसके आधुनिक युग के पुरोधा ऋषि दयानन्द हैं ।

....पृष्ठ ३ का शेष

उडेल कर उन्हें देते रहे । यह है समर्पण का प्रभाव, यज्ञीय भावना का उदाहरण । इदन्नमम का प्रतिफल । सब कुछ ईश्वर को समर्पित कर्म का फल । पूज्य स्वामी जी को ईश्वर के प्रसाद के रूप में जो कुछ भी प्राप्त होता । परम कृपालू प्रभू अपनी कृपाओं की जिस भी रूप में उनके ऊपर वर्षा करते । स्वामी जी महाराज उसे लोक कल्याण रूपी यज्ञ में, परोपकार रूपी यज्ञ में लगा देते । उससे सर्वहुत यज्ञ कर देते । यानि सब कुछ ईश्वर के ही वरद पुत्रों के कल्याण में लगा देते । अपने पास कुछ भी तो शेष नहीं रखते । यहां तक कि उन्होंने अपने स्वास्थ्य, अपने शरीर की भी परवाह नहीं की । न्तिा नहीं की । कहते थे- जितना इससे काम ले सकू ले लूं । न जाने कब यह जीवन हाथों से खिसक जाए । कब श्वासों की डोर टूट जाए । शरीर नश्वर है । इसने एक न एक दिन नष्ट होना ही है । यह क्षीण दर क्षीण होता जाएगा । इससे जितना भी काम ले सकूं ले लूं । अपने कर्तव्य कर्मों को जितना सम्पन्न कर सकूं कर लूं । विदुर जी कहते हैं-

अद्येव कुर्वीत यद श्रेयो मात्वां कालोऽत्यगाद ।
अकृतेष्वेव कार्येषु मृत्युवैसम्पकर्षति ।।

जो कल्याणकारी कतर्व्यकर्म हैं उन्हें आज ही कर डालो । उसे कल पर न डालो । कल का क्या भरोसा । कल आए न आए । समस्त कार्य अधूरे ही पड़े रह जाऐंगें और मृत्यु तुम्हें घसीट कर ले जाएगी । यही सोच कर पूज्य स्वामी जी आलस्य, प्रमाद का सर्वथा परित्याग कर सर्दी-गर्मी की परवाह किए बिना अपने कर्तव्य कर्मों को करते रहे । शरीर के अस्वस्थ होने पर भी उन्होंने इसे विश्राम नहीं दिया । इसे कहते हैं- **आयुर्यज्ञेन कल्पताम् प्राणोर्यज्ञेन कल्पतां ।** इस प्रकार के जीवन के धनी, यज्ञरूप परमात्मा के प्रति समर्पित जीवन वाले सुमेधा के स्वामी, पूज्य स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज के चरणों में प्रणतिपूर्वक उन्हीं के पदचिन्हों पर पग धरता- पूज्य चरणों का चरण रज ।

यज्ञैश्वर्यम्

-देव नारायण भारद्वाज

लाठी के सहारे वे तीन कौन आ रहे हैं। तीन बूढ़े हैं। एक परिवार के द्वार पर आकर खड़े हो गए। ''भज ओंकारं भज ओंकारं, ओंकारं भज मोदमते'' बोलकर उन्होंने ध्वनि को गुञ्जायमान कर दिया। सुनकर स्फूर्तिवती नव पुत्रवधू बाहर आकर खड़ी हो गई। पुत्रवधू अंग्रेजी पढ़ी लिखी है, उसकी ही क्या आज तो फेरी लगाने वाले भी टी.वी., मोबाइल की शिक्षा से बात बात में हिन्दी के साथ अंग्रेजी की टाँग अवश्य तोड़ते हैं। इसी प्रवृत्ति के अनुसार नववधू ने परिचय की दृष्टि से उन तीनों से क्रमशः पूछ लिया - **'What's your name sir'** (व्हाट्स योर नेम सर) श्रीमन् आपका शुभ नाम क्या है। उन्होंने भी आधुनिकता का परिचय देते हुए उत्तर दिया तथा नाम बताने आरम्भ कर दिए। प्रथम ने कहा मेरा नाम **P.P.** (पी.पी.) है। दूसरे ने कहा मेरा नाम भी **P.P.** (पी.पी.) है। और तीसरे ने बताया- बेटी ! मेरा नाम भी **P.P.** (पी.पी.) है। इतनी वार्ता सुनकर नववधू की सासू माँ भी बाहर निकल आई। उन्होंने तीनों बूढ़ों को प्रणाम किया। नववधू की वार्ता भंग हो गई तीनों बूढ़ों ने वार्ता की नई लय इस प्रकार प्रकट की।

माँजी हम तीनों मूखे हैं, भोजन करना चाहते हैं। गृहिणी ने कहा ''महाशय, आप तीन भीतर पधारें। हमें आप लोगों को अपने आँगन में बैठाकर भोजन कराने में बड़ी प्रसन्नता होगी।'' तीनों ने मना करते हुए कहा- ''हम तीनों के मध्य एक समझौता है, तीनों में से कोई एक ही किसी के घर में जा सकता है। ''ऐसा क्यों श्रीन ?'' अचंभित गृहिणी ने व्यग्रता के साथ पूछा। उन्होंने उत्तर दिया- आपकी पुत्रवधू ने अंग्रेजी में परिचय पूछा था- सो हमने अंग्रेजी में उत्तर दे दिया था, क्योंकि हम तीनो का नाम **P.P., P.P., P.P.** है। अब आपको हिन्दी में स्पष्ट करते हैं- ''हम तीनों के नाम क्रमशः प्रगति प्रकाश, प्फुल्ल प्रकाश और प्रेम प्रकाश हैं। आप तीनों में से किसी एक को अपने घर में बुला सकती है।'' यह सुनकर गृहस्वामिनी असमंजस में पड़ गई। उसने तीनों वृद्धों से क्षणभर प्रतीक्षा करने को कहा और इस बीच उसने अपने पति से परामर्श कर लिया; और बड़ी मनुहार के साथ प्रेम-प्रकाश को घर के भीतर आने का बुलावा दिया। सोचा यह गया कि और कुछ नहीं- सम्पूर्ण घर प्रेम के प्रकाश से परिपूर्ण हो जाए। गृहिणी ने देखा कि प्रेम प्रकाश के आगे आगे बढ़ते ही दूसरे दोनों बूढ़े भी उसके साथ ही घर में प्रवेश करने लगे। गृहिणी ने उन्हें टोका- हमने तो प्रेम प्रकाश को बुलाया, आप दोनों क्यों आ रहे है ? दोनों ने एक साथ उत्तर दिया- तुम और तुम्हारा पति दोनों बड़े समझदार हो। तुमने प्रगति प्रकाश या प्रपुल्ल प्रकाश को न्योता होता, तो शेष दोनों बाहर ही खड़े रहते, लेकिन प्रेम प्रकाश का साथ हम कभी भी नहीं छोड़ते, वह जहाँ भी जाते हैं, हम दोनों उनके पीछे-पीछे चल पड़ते है। अस्तु हम दोनों को भी अन्दर आना ही होगा। गृहणी ने कहा- ठीक है आप अवश्य ही पधारें- हमारी तो पहले से ही यही अभिलाषा थी। आप तीनों का स्वागत है।

इधर तीनों बूढ़ों ने अन्दर प्रवेश किया, उधर गृहपति ने यज्ञवेदी से उठकर सामगानपूर्वक अतिथियों का स्वागत किया।

प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तेषे मित्रमिव प्रियम्।
अग्ने रथं न वेद्यम ॥ साम ५॥

इस वेदी पर धन्य पधारे।
प्यारे प्यारे अतिथि हमारे ॥
थी हमें तुम्हारी अभिलाषा। थी शक्ति न थी ऐसी आशा।
परमश्रेष्ठ हैं प्रिय यथेष्ठ हैं, हुए सुगन्धित सदन हमारे
प्यारे प्यारे अतिथि हमारे ॥१॥
उन पर अपना हृदय लुटाएँ। और वन्दना क्या हम गाएँ।
स्नेह सखा सा लेकर आए, नारायण इस नर के द्वारे।
प्यारे प्यारे अतिथि हमारे ॥२॥
हो उठी सुगन्धित वेदी है। दे रही ज्ञान बहुभेदी है।
चमक गए सब देव उपस्थित, पाकर प्रिय आदर्श तुम्हारे।
प्यारे प्यारे अतिथि हमारे ॥३॥
(साम-श्रद्धा-देवातिथि)

गृहस्वामी द्वारा स्वागत में गाए गए गायत्री गीत को सुनकर तीनों बूढ़ों ने क्रमश अपनी प्रतिक्रिया प्रस्तुत की। प्रगति प्रकाश जी बोल पड़े- इस सामगान गायत्री के प्रथम पद ''श्रेष्ठं वो अतिथि स्तुषे'' को आपने मेरे लिए बोला है- इसी को देवपूजा या देवस्तुति कहते हैं। इसकी धारणा से ही गृह-समाज व राष्ट्र में सर्व प्रगति के द्वार खुलते हैं। स्तुति के द्वारा ही लक्ष्यों का निर्धारण होता है। ठीक है तो दूसरा मध्यवर्ती पद ''मित्रमिवप्रियम्'' आपने मेरे लिए बोला है- प्रेम प्रकाश जी बोल पड़े। स्वाभाविक स्नेह स्वार्थ भावना से ऊपर उठकर किए जाने के कारण व्यक्ति सबका प्रिय बनता है। ठीक है। तत्काल प्रफुल्ल प्रकाश जी बोल पड़े- मन्त्र का अन्तिम पद बचा है, और तीनों बूढ़ों में मैं बचा हूँ। इसका तथ्य भी मेरे ही कथ्य को प्रकट करता है। ''अग्ने रथं न वेधम'' जीव मात्र को वे प्रभु ही (अग्ने-अग्निम्) आगे ले चलने वाले हैं। ''रथं न वेद्यम्'' रथ की भाँति जानने योग्य हैं। जिस प्रकार रथ से यात्रा की पूर्ति में सहायता मिलती है, इसी प्रकार मानव-जीवन की यात्रा भी प्रभु रूप महारथ पर आश्रित प्रदान करते हैं, उसे आप पात्रजनों को दान करके प्रफुल्ल प्रकाश बन जाते हैं। हमें अपने नाम पर गर्व है।

जैसे कोई भी व्यक्ति अपने हिमाद्रि (शीतल शान्त सिर) से पहचाना जाता है; किन्तु उसके व्यक्तित्व व चरित्र की पहचान उसके दोनों हाथ व इनके मध्य में स्थित हृदय से होती है वैसे ही व्यक्ति के हृदय में प्रेम प्रकाश और उसके पार्श्ववर्ती दोनों हाथों में प्रगति प्रकाश एवं प्रफुल्ल प्रकाश हो तो वह व्यक्ति सम्पूर्णतया यज्ञपुरुष बन जाता है। वेद व्याख्या ग्रन्थ शतपथ ब्राह्मण इस कथन का समर्थन करता प्रतीत होता है। वह कहता है- ''यज्ञो वै विष्णुः''- यज्ञ साक्षात विष्णु है। ''विष्णुः वै राष्ट्रः''- इस विष्णु का प्रत्यक्ष व्यवहार्थ स्वरूप राष्ट्र है। किसी चित्रकार ने विष्णु की अथवा राष्ट्र की चार भुजाएँ बना दीं, और चारों में शंख-चक्र-गदा एवं पद्म (कमल) पकड़ा दिए; जो स्वयमेव अपनी भूमिका का प्रदर्शन करने लगे। ज्ञान से ही भूमि से व्योम तक शंख (शान्ति), कर्म के चक्रमण द्वारा समृद्धि, गदा स्वरूप शस्त्राभ्यास से राषट्र रक्षण और नितान्त श्रमशीलता के श्वेद-सरोवर में कमल खिलते हैं। इसी स्वाभाविक एवं शैक्षणिक अभ्यास के सूत्रदार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र उपाधिधारी राष्ट्र की प्रतिष्ठित भुजाएँ है। पूर्वकाल की भाँति आज भी योग्यता-क्षमता-दक्षता अर्जित कर कोई भी व्यक्ति किसी भी पद-प्रतिष्ठा को प्राप्त कर लेता है। इसी पारस्परिक सहयोग-समन्वय की पृष्ठभूमि को स्वामी दीक्षानन्द सरस्वती ने अपने ग्रन्थ 'अग्निहोत्र सर्वस्व' में इस तरह व्यक्त किया है :-

''अनन्त योनियों में मनुष्य ही वह योनि है जिसे दश अंगुलियों वाले दो कर मिले हैं। इन करों की सार्थकता दया, दान और दक्षिणा से ही है। यदि इन करों ने अपनी थाली के ग्रास को किसी भूखे प्राणी के मुख तक नहीं पहुँचाया, यदि इन करों ने किसी दुखिया के जख्मों पर मरहम नहीं लगाया, यदि इन करों ने किसी दीन-दरिद्र के सिर को नहीं सहलाया और इन करों ने समाज और राष्ट्र के हित कुछ दान नहीं किया, तो इनका होना व्यर्थ है। इसी अभ्यास के लिए ही तो हाथ को सीधा रखवाकर यज्ञाग्नि में आहुति दिलाई जाती है उस समय हाथ को कोहनी से घुमाकर मुख की ओर नहीं लाया ाता।'' आचार्यों के महाआचार्य स्वामी समर्पणानन्द ने स्वार्थ से ऊपर ईर्ष्या-विजय पर बल दिया है। वे अपने ग्रन्थ ''पञ्च यज्ञ प्रकाश'' में व्यक्त करते हैं। ''यज्ञ-भावना का सबसे बड़ा शत्रु ईर्ष्या है। ईर्ष्या भी वास्तव में स्वार्थ का ही रूपान्तर है। यह उद्देश्य-प्रणिधान ईर्ष्या पर विजय में किस प्रकार सहायक होता है, यह दृष्टान्त से समझाया जा सकता है।

कहते हैं कि ए समय एक राजा के दरबार में दो स्त्रियाँ एक बच्चे के विषय में झगड़ा करती हुई उपस्थित हुई। दोनों उस बच्चे को अपना कहती थीं। महाराज कई दिन तक यत्न करने पर भी निर्णय न कर सके। राजा को चिन्तित देखकर रानी ने इसका कारण पूछा। महाराज ने सब वृतान्त कह सुनाया। रानी ने मुस्कराकर कहा- देव। यह अभियोग स्त्री जाति का है, इसका निर्णय मैं करूँगी। अगले दिन रानी स्वयं सिंहासन पर विराजीं। दोनों स्त्रियाँ सामने लाई गईं। रानी ने निर्णय सुनाया० आराकश को बुलाकर इस बच्चे को मध्य से चीरकर आधा-आधा बाँट दिया जाए। निर्णय सुनकर एक स्त्री बड़ी प्रसन्न हुई। बोल उठी क्या अच्छा निर्णय हुआ। झगड़ा ही न रहा। दूसरी सहम गई बोली-मुझे बच्चा नहीं चाहिए, मैंने अपना दावा छोड़ा, पर इसे वीरो मत। रानी ने कहा ''सैनिको जाओ, बच्चा उसे दे दो जो कहती है मेरा नहीं। वही सच्ची माँ है, जिसे बच्चे की जा अपने अधिकार से अधिक प्यारी है।

वही सच्चा नागरिक व सिपाही है जिसे राष्ट्र अथवा अपने संगठन का उद्देश्य अपनी जान, अपने यश, अपने अधिकार से भी प्यारा है। इसी का नाम है उद्देश्य-प्रणिधान, जो यज्ञ व संगठन का मूल मंत्र है। लेखारम्भ के तीन बूढ़े कोई साधारण नहीं प्रस्तुत सकल शाश्वत वृद्धियों से परिपूर्ण यज्ञ-प्रभु के दिशा-दर्शक 'सदावृध सखाः' (सामः६८०) समझना चाहिए।

स्वाध्यायात् मा प्रमदः-स्वाध्याय में प्रमाद मत कर

-डॉ. वेदपाल सुनीथ

फलों के प्रति प्रत्येक मानव लालायित है। उसे विश्वास है यदि मैं कर्म करूँगा तो फल तो भगवान् अवश्य देगा। इसलिए सुख रूप फलों की लालसा से लगा है कर्म करने में। आस्तिक की बात छोड़ो, नास्तिक लोग भी कर्म फल व्यवस्था में आस्था रखते हैं, उन्हें भी विश्वास है हम जो काम करेंगे उसका फल ज़रूर निकलेगा इसलिए वे भी फलाकांक्षा से किसी न किसी अच्छे-बुरे काम में सलग्न है।

भगवान् का काम है फल देना, वह देता है। नास्तिक आस्तिक सबको उनके कर्मों के अनुसार फल देना उसका काम है। हम कर्म करते हैं तथा सुख और दुःख पाते रहते हैं। पुण्य का फल सुख है, तो पाप का फल दुःख। सभी सुख चाहते हैं इसलिए पुण्य कर्मों के प्रति सभी भद्रजनों के मन में उत्सुकता है।

पुण्य क्या है ? जब हमने शास्त्रकारों से पूछा तो वे बोले-बल, बुदद्धि, पुरुषार्थ से उपार्जित धन का पात्र को दान ही सबसे बड़ा पुण्य है, यह परोपकार रूप धर्म ही मनुष्य को पशुओं से पृथक् करता है, परंतु क्या पुण्य के फल स्वरूप सुख को पाकर मनुष्य कृतकृत्य हो सकता है, शांति की शाश्वत् स्थिति को प्राप्त कर सकता है। ऋषि बोले नहीं, इसी सारी पृथ्वी को धन-धान्य से भरी हुई को भी देकर मानव शाश्वत शांति नहीं पा सकता, दान का फल सुख है, पर नहीं जानते महर्षि पतंजलि ने योग दर्शमें स्पष्ट अपना अनुभव लिखा है- **'सुखानुशयी रागः'** (योगदर्शन) सुख के साथ राग का उद्भव है, राग स्वयं में एक क्लेश है।

यह देखो युधिष्ठिर है। यह बहुत बड़ा पुण्यकर्मा है। सारी पृथ्वी इसने जीत ली। आज इसका अश्वमेघ यज्ञ समाप्त हुआ है। सारी पृथ्वी के रत्नों को, घनों को दान देने में लगा है पर क्या इसका हृदय शांत है ? नहीं इससे पूछो, पूछने पर बताएगा हम राजाओं को शांति कहाँ, शांति का पान तो ऋषि करते हैं। हम यह सुनकर घबरा गए, यह क्या बात है, यह चक्रवर्ती सम्राट भी शांत नहीं। हम बैठ गए शास्त्र के चरणों में। हमने कहा - आप वेद शास्त्र पढ़ते हैं हमें वह पुण्य कर्म बताओ जिससे हम अकिंचनों का कल्याण हो, शांति मिले। विद्वान बोले - शतपथ के रचयिता महर्षि याज्ञवल्क्य का नाम सुना होगा, वे बड़े भारी विद्वान थे, वेदों के सार को उन्होंने समझा था, उन्होंने वेदों का व्याख्यान करते हुए लिखा है। हमने बड़ी उत्सुकता से पूछा क्या लिखा ? विद्वान बोले सुनो-

'यावन्तं ह वा इमां पृथ्वीं वित्तेन पूर्णा ददत् लोकं जयति त्रिस्तावन्तं जयति य एव विद्वान् अहरह- स्वाध्यायमधीते - तस्मात् स्वाध्यायोडध्येतव्यः। (माध्यन्दिन शतपथः ११-५-६-३१)

(अर्थात्) धन से परिपूर्ण इस पृथ्वी का दान करके जिस पुण्य लोक (सुख-विशेष) का लाभ होता है, इससे तीन गुणा अर्थात् सर्व-विधि-शान्ति रूप सुख उसे मिलता है जो समझदार व्यक्ति प्रतिदिन स्वाध्याय करता है। इसलिए स्वाध्याय करना चाहिए।

हम बोले भगवन्! हम बहुत पढ़ते हैं- अनेक ग्रन्थ पढ़ डाले हमने, पर शांति नहीं मिली, इसका क्या कारण है ? विद्वान बोले - तुम स्वाध्याय के दो अर्थ हैं-

1 एक - स्व + अध्याय = अपना अध्ययन अर्थात् आत्मचिंतन। प्रातःकाल स्नान करके एकांत में बैठकर क्या कभी सोचते हो, चिंतन करते हो कि मैं क्या कर रहा हूँ, मेरा स्वरूप क्या है, यह संसार कैसा है, क्या कभी विचारते हो ? हमने कहा नहीं, तो शांति कहाँ से मिले।

1 दूसरा स्वाध्याय का अर्थ है-सु + अध्या = अर्थात् अच्छे वेद शास्त्रों का, उपनिषदों का एकांत शांत स्थान पर बैठकर सुविचारपूर्वक अध्ययन करना।

जो इस प्रकार स्वाध्याय करता है वह संसार में रहता हुआ भी कर्म करता हुआ भी निर्लिप्त रहता है। सांसारिक सुख-दुःख उसे नहीं सताते क्योंकि उसे चिंतन से निश्चय हो जाता है कि सुख-दुःख उसे नहीं सताते क्योंकि उसे चिंतन से निश्चय हो जाता है कि सुख-दुःख इन्द्रियों तक सीमित है। फिर वह शाश्वत् शांति की अनुभूति करता है।

यहस्वाध्याय का महान् फल जो धन से दौलत से कदापि प्राप्त नहीं होता, इसलिए ऋषियों ने कहा - हे शांति के इच्छुक मनुष्य! नित्य स्वाध्याय कर - **'स्वाध्यायात् मा प्रमदः'**- स्वाध्याय में प्रमाद मत कर !!

वेद पर्यावरण संरक्षण का संवाहक है

-डॉ. वेदपाल सुनीथ

आज पूरा विश्व प्रदूषण की समस्या से जूझ रहा है। वायु, जल, ध्वनि, भूमि प्रदूषण से मानव-जीवन खतरे में पड़ता जा रहा है। वृक्ष-वनस्पतियों का संहार, जीव-जन्तुओं का संहार, बढ़ता शहरीकरण, उद्योग-धन्धों का विस्तारीकरण, बढ़ते वाहनों का सैलाब, पटाखे-आतिशबाजी से वायु, जल, भूमि प्रदूषण से सराबोर हो रहे हैं। आने वाले भविष्य में शुद्ध वायु मिलनी मुश्किल हो जाएगी। इसी प्रकार कीटनाशकों के प्रयोग से अन्न फल, सब्जियाँ भी शुद्ध नहीं रह गई हैं। शुद्ध दूध भी नहीं। ऐसी स्थिति में मनुष्य यदि बीमार पड़ जाए तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। हम सभ्यता के नाम पर पोलिथीन का प्रयोग कर रहे हैं। प्लास्टिक के सामानों का धुआँधार प्रयोग हो रहा है। ये सब प्रदूषण बढ़ाने में वृद्धि कर रहे हैं।

वेद भगवान ने पर्यावरण को शुद्ध रखने के लिए बहुत बल दिया है। देखें-

अद्भ्यः स्वाहा वार्भ्यः स्वाहोदकाय स्वाहा तिष्ठन्तीभ्यः स्वाहा स्रवन्तीभ्यः स्वाहा स्यूद्याभ्यः स्वाहा धार्याभ्यः स्वाहार्णवाय स्वाहा समुद्राय स्वाहा सरिराय स्वाहा ॥

यजु. २२/२५

अर्थात् ''जलों के लिए स्वाहा (अद्भ्यः), उत्तम जलों के लिए स्वाहा (वार्भ्यः), ऊपर जाते जल के लिए स्वाहा (उदकाय), बहते हुए जल के लिए स्वाहा (तिष्ठन्तीभ्यः), शीघ्र बहते हुए जल के लिए स्वाहा (स्रवन्तीभ्यः), कुएँ में जलों के लिए स्वाहा (कूप्याभ्यः), धारण करने योग्य जल के लिए स्वाहा (धार्याभ्यः), बड़े नद वाले जल के लिए स्वहा (अर्णवाय), महासागर के लिए स्वाहा (समुद्राय), सुन्दर जल के लिए स्वाहा (सरिराय) है।''

वाताय स्वाहा धूमाय स्वाहाभ्राय स्वाहा
मेघाय स्वाहा विद्योतमानाय स्वाहा
स्तनयते स्वाहावस्फूर्जते स्वाहा
वर्षते स्वाहाववर्षते स्वाहोग्रं वर्षते स्वाहा
शीघ्रं वर्षते स्वाहोद्‌गृह्णते
स्वाहोद्‌गृहीताय स्वाहा
पृष्णते स्वाहा शीकायते स्वाहा प्रष्वाभ्यः स्वाहा
ह्रादुनीभ्यः स्वाहा नीहाराय स्वाहा ॥

यजु. २२/२६

अर्थात् ''पवन के लिए स्वाहा (वाताय), धूम के लिए स्वाहा (धूमाय), मेघ के लिए स्वाहा (मेघाय), मेघ के कारण के लिए स्वाहा (अभ्राय), घनघोर विद्युतमय बादलों के लिए स्वाहा (विद्योतमानाय), बिजली के लिए स्वाहा (स्तनयते), विद्युत के लिए स्वाहा (अवस्फूर्जते), नीचे वाले बादलों के लिए स्वाहा (अववर्षते), तेज बरसने वाले बादलों के लिए स्वाहा (उग्रम् वर्षते), शीघ्र बरसने वाले बादलों के लिए स्वाहा (शीघ्रम् वर्षते), ऊपर वाले बादलों के लिए स्वाहा (उद्‌गृहीताय), पुष्टिवाले मेघ के लिए स्वाहा (पृष्णते), ठहर-ठहरकर करसने वाले बादलों के लिए स्वाहा (शीकायते), घनघोर वर्षा करने वाले बादलों के लिए स्वाहा (प्रष्वाभ्यः), गढ़गड़ाने वाले बादलों के लिए स्वाहा (ह्रादुनीभ्यः), कुहर की शुद्धि के लिए स्वाहा (नीहाराय) है।''

उक्त दोनों मंत्रों के देवता क्रमशः जल और वात हैं। जल और वात अर्थात् वायु जलवायु शब्द का निर्माण करते हैं। जलवायु परिवर्तन, जल-वायु की शुद्धता पर्यावरण संरक्षण में मुख्य साधन हैं। वेद भगवान ने इन दोनों के लिए ''स्वाहा'' क्रिया का प्रयोग किया है। यह एक ऐसा शब्द है जो सर्वशुद्धता का संवाहक है। जल के लिए स्वाहा। इसका अर्थ हुआ कि जल को शुद्ध रखें। वायु के लिए स्वाहा। इसका अर्थ हुआ कि वायु को शुद्ध रखें। चूँकि वेद में सारा ज्ञान बीजरूप में है। इसलिए इस पद की गहराई में जाना होगा। वेद भगवान ने जल और वायु के लिए 'स्वाहा' शब्द कहकर छोड़ दिया। अब मानव को चाहिए कि वह इसकी गहराई में जाए। वेद भगवान कहते हैं-

नक्षत्रेभ्यः स्वाहा नक्षत्रियेभ्यः स्वाहोरात्रेभ्यः स्वाहार्धमासेभ्यः स्वाहा मासेभ्य) स्वाहा ऋतुभ्यः स्वाहार्त्तवेभ्यः स्वाहा संवत्सराय स्वाहा द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा चन्द्राय स्वाहा सूर्याय स्वाहा रश्मिभ्यः स्वाहा वसुभ्यः स्वाहा रुद्रेभ्य) स्वाहादित्येभ्यः स्वाहा मरुद्भ्यः स्वाहा विश्वेभ्यो देवेभ्य) स्वाहा मूलेभ्यः स्वाहा शाखाभ्यः स्वाहा वनस्पतिभ्य) स्वाहा पुष्पेभ्यः स्वाहा फलेभ्य) स्वाहौषधीभ्यः स्वाहा ॥

यजु. २२/२८

अर्थात् ''नष्ट न होने वाले पदार्थों के लिए स्वाहा (नक्षत्रेभ्यः), उन समूहों के लिए स्वाहा (नक्षत्रियेभ्यः), दिन-रात के लिए स्वाहा (अहोरात्रेभ्यः). पखवाड़ों के लिए स्वाहा (अर्द्धमासेभ्यः), ऋतुओं के लिए स्वाहा (ऋतुभ्यः) महीनों के लिए स्वाहा (मासेभ्यः) ऋतुओं में उत्पन्न पदार्थों के लिए स्वाहा (आर्त्तवेभ्यः), वर्षों के लिए स्वाहा (संवत्सराय), प्रकाश और भूमि के लिए स्वाहा (द्यावापृथिवीभ्याम्), चन्द्रलोक के लिए स्वाहा (चन्द्राय), सूर्यलोक के लिए स्वाहा (सूर्याय), सूर्य किरणों के लिए स्वाहा (रश्मिभ्यः), पृथिवी आदि लोकों के लिए स्वाहा (वसुभ्यः) दस प्राणों के लिए स्वाहा (आदित्येभ्यः), पवनों के लिए स्वाहा (मरुद्भ्यः), सभी की जड़ों के लिए स्वाहा (मूलेभ्यः), शाखाओं के लिए स्वाहा (शाखाभ्यः), वनस्पतियों के लिए स्वाहा (वनस्पतिभ्यः), फूलों के लिए स्वाहा (पुष्पेभ्यः), फलों के लिए स्वाहा (फलेभ्यः), ओषधियों के लिए स्वाहा (ओषधिभ्यः) है।''

इस मंत्र के देवता नक्षत्रादि हैं। मंत्र में नक्षत्र, पृथिी, पवन, फूल, फल, वनस्पति, शाखा, मूल, ऋतु, काल, चन्द्र, सूर्य, कृष्ण-शुक्ल पक्ष, महीना, वर्ष, भूमि, किरण, दिन, रात आदि सभी के लिए 'स्वाहा' शब्द आया है। इस प्रकार इस अखिल सृष्टि में जो कुछ दृश्य-अदृश्य पदार्थ हैं उन सबको 'स्वाहा' शब्द से जोड़ा है। जव सारी सृष्टि निर्मल रहेगी तो मनुष्य को सुख, शान्ति और आनन्द की प्राप्ति होगी। रोग-शोक कहीं नहीं रहेंगे। सबको आरोग्य की प्राप्ति होगी। हमारे प्राचीन ऋषि-मुनि वेद भगवान की इस आज्ञा का सभ्य पालन करते थे और 'स्वाहा' शब्द को आत्मसात् किए थे।

'स्वाहा' शब्द सु उपसर्ग पूर्वक + आङ् प्रत्य + हु धातु से बना है। 'हू' धातु का अर्थ दान और आदान होता है। दयानन्दवैदिककोष में 'स्वाहा' शब्द के अनेक अर्थ संग्रहीत किए गए हैं जिनमें सत्क्रिया,

शोभनं देयम्, सत्यवाक्य, धर्मक्रिया, साध्वी क्रिया, सत्यवाणी, सुसंस्कृत सुष्ठु, संस्कार क्रिया आदि मुख्य हैं। वास्तव में यह शब्द

संस्कार और शुद्धीकरण की व्यापक गहराई लिए हुए विशेष भावपूर्ण है। यह अनेकार्थक शब्द किसी भी पदार्थ के शुद्धीकरण से विशेष सम्बन्ध रखता है। ''वाताय स्वाहा'' का अर्थ हुआ-वायु की शुद्धि, 'अद्भ्यः स्वाहा' का अर्थ हुआ-जल की शुद्धि, समुद्राय स्वाहा का अर्थ हुआ- समुद्र की शुद्धि, 'द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा' का अर्थ हुआ- प्रकाश और भूमि की शुद्धि। वायु तो जीवन के लिए प्राण है। इसके बिना हम एक पल भी नहीं जी सकते। आज वही अशुद्ध हो गई है। वेद भगवान ने सृष्टि के आदि में ही बता दिया है कि वायु को शुद्ध रखो। जल को शुद्ध रखो। भूमि को शुद्ध रखो। सूर्य, चन्द्र, नक्षत्रों को शुद्धिक्रिया से जोड़े रखो। आकाश को शुद्ध रखो, तभी जीवन सुखी होगा।

वर्तमान समय में विज्ञान के साधनों से प्रदूषण उत्पन्न हो रहा है। इसका उपाय ढूँढ़ना होगा अब हमें सौर ऊर्जा से चलने वाले साधनों को विकसित करना होगा। वायु से चलने वाले साधनों को विकसित करना होगा। वनों को बढ़ाना होगा। वृक्षारोपण पर विशेष ध्यान देना होगा। साइकिल, रिक्शा, घोड़ागाड़ी जैसे साधनों को अपनाना होगा। इनसे प्रदूषण नहीं होता। हवन-यज्ञ की प्राथमिकता देनी होगी। यज्ञ पर्यावरण की सर्वहितकारी विधि है। गोवंश को बढ़ाकर उनका उपयोग करना होगा। पटाखा, आतिशबाजी जैसे प्रदूषणकारक तत्त्वों का बहिष्कार करना होगा। पॉलिथीन, प्लास्टिक का उपयोग न्यून करना पड़ेगा। अन्यथा बढ़ता प्रदूषण मानव-जीवन को खतरे में डाल देगा। अभी हाल में राजस्थान पत्रिका में प्रकाशित समाचार कि दिल्ली में हर तीसरा बच्चा फेफड़े के रोग से ग्रस्त है। इसका मुख्य कारण वायु प्रदूषण है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती सत्यार्थ प्रकाश के तीसरे समुल्लास में लिखते हैं ''दुर्गन्धयुक्त वायु और जल से रोग, रोग से प्राणियों को दुःख और सुगन्धित वायु तथा जल से आरोग्य और रोग के नष्ट होने से सुख प्राप्त होता है।'' वे लिखते हैं- ''जब तक इस होम करने का प्रचार रहा तब तक आर्यावर्त देश रोगों से रहित और सुखों से पूरित था, अब भी प्रचार हो तो वैसा ही हो जाए।'' इस प्रकार प्रदूषण को दूर करने का सर्वोत्तम उपाय यज्ञ है।

ऐसी भी हैं वैदिक सिद्धान्तसिक्त सन्तानें

-प्रियवीर हेमाइना

सुप्रसिद्ध कर्मयोगी समाज सुधारक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी महाराज ने अपने निर्वाण से पूर्व ही जो सभा को दिया था उसमें उन्होंने जहाँ अन्य बातें लिखी थी वहाँ अपने अन्त्येष्टि संस्कार के बारे में भी स्पष्ट यह खिा था-

''जैसे इस सभा को मेरी और मेरे सब पदार्थों की यथाशक्ति रक्षा और उन्नति करने का अधिकार है, वैसे ह उसे मेरे मृतक शरीर के संस्कार का भी है। वह न तो गाड़ा जाय, न जल-प्रवाह किया जाय और न जंगल में फेंका ही जाय। 'संस्कार विधि' में वर्णित वेद विहित विधि से वेदी बनाकर वेदमंत्रों से शव को भस्म किया जाय! वेद-विरुद्ध कुछ भी न किया जाय। भस्म खेत में डाल दी जाय।''

महर्षि जी की उक्त इसी अभिलाषा के अनुरूप ही उनका अन्त्येष्टि संस्कार उनके भक्तों द्वारा किया गया था और उनके अस्थि-अवशेषों को अजमेर स्थित शाहपुरा के बागकी भूमि (खेत) में ही मृत्तिकासात् किया गया था।

ऊपर के इ उद्धरण को देने का अभिप्राय यह ही है कि जैसी विधि अपने अन्त्येष्टि संस्कार के विषय में आचार्य प्रवर श्री महर्षि दयानन्द जी महाराज ने लिखी थी, वैसी ही वैदिक विधि से अन्त्येष्टि संस्कार करना पूर्णतः सर्वश्रेष्ठ है। इसी विधि को व्यवहार-क्षेत्र में उतारना आज के समय में आवश्यक ही नहीं अत्यावश्यक है क्योंकि यही विधि बढ़ते पर्यावरण प्रदूषण को नियंत्रित करने में सहायक बनेगी, ऐसी मेरी धारणा है। पर्यावरण को शुद्ध-स्वच्छ रखना हम सब ही का सामाजिक दायित्व है। पर्यावरण बचेगा तो हमारा अस्तित्व बचेगा, अन्यथा हमारा और हमारी आनेवाली पीढ़ी का विनाश निश्चित है। निकट भविष्य में पर्यावरण प्रदूषण के भयंकर परिणाम होंगे ही। पर्यावरण को शुद्ध तथा स्वच्छ बनाकर ही स्वस्थ एवं बलिष्ठ नागरिक सुखी, शान्त तथा आनन्दमय जीवन व्यतीत कर सकेंगे।

ऐसा नहीं कि महर्षि जी द्वारा बताई गई विधि से अन्त्येष्टि संस्कार करने वाले आ नहीं है, हैं और अवश्य हैं, जिसका केवल एक ही उदाहरण देना पर्याप्त समझूंगा जिसकी जानकारी मुझे अर्थात् इन पंक्तियों के लेखक को है। अभी पीछे उत्तर प्रदेश राज्य के अन्तर्गत बागपत जनपद के उसी ऐतिहासिक स्थान ''वारणावत'' (बरनावा), हाँ पाण्डवों को जलाने के लिए दुर्योधन ने लाक्षागृह बनवाय था, के पास फजलपुर सुन्दर नगर नामा गाँव में संस्थापित आर्य समाज के मंत्री श्री विनोद कुमार आर्य के पूज्य पिता श्री आशाराम जी का अन्त्येष्टि संस्कार पूर्णतः वेद विहित विधि से ही आर्य सन्तानों ने १८ नवम्बर २०१६ को खेत में किया।

दाहकर्म के तीसरे दिन २० नवम्बर को आर्य पुरुषों ने खेत में जाकर चिता से अस्थि संचय कर, उसी खेत में अस्थि अवशेषों को गड्ढे में डालकर पार्थिव अंशों में तो विलीन किया ही वही श्रद्धापूर्वक एक पौधा भी आरोपित कर दिया जिससे जगत् का वातावरण शुद्ध होता रहे! भस्म भी खेत में ही बिखेर दी गई।

धन्य हैं ऐसी दिक सिद्धान्तसिक्त सन्तानें जो अपने सर्वश्रेष्ठ वैदिक सिद्धान्तों एवं परम्पराओं को व्यवहार-क्षेत्र में निष्ठापूर्वक उतार रही हैं और पर्यावरण के संरक्षण के सम्बन्ध में प्रेरणा की स्रोत भी बन रही हैं सो भी एक अच्छे पिता से मिले अच्छे संस्कारों के कारण से ही। किम् बहुना? अगर संस्कार-पद्धति के रहस्य को समझकर हर माता-पिता प्रण कर ले कि वे सन्तान में ऐसे ही संस्कारों का आधान करेंगे जिससे वे उनसे भी उत्कृष्ट-कोटि के हों, तो हर बीस-पच्चीस साल के बाद एक नई ही सुसंस्कृत पीढ़ी का, एक नये ही सुसंस्कृत युग का आगमन होगा ही। सी सन्तानें होंगी वैसा युग होगा ही। माता-पिता पथा समाज के मस्तिष्क को बदलकर ही हिटलर ने बीस बरस मात्र में ही एक अद्भुत सुसंस्कारी युवा-पीढ़ी का निर्माण कर दिया था। यह नई पीढ़ी उन ही विचारों, संस्कारों का मूर्त-रूप थी जो जर्मनी के एक कोने से दूसरे कोने तक एक लहर की तरफ ही बहने लगी थी।

काश! कहीं इस अपने आर्यावर्त्त देश में भी कश्मीर से कन्याकुमारी तक ऐसी ही सुसंस्कारी अद्भुत सन्तानें दिखाई पड़े और इसका जगद्गुरुत्व पुनः अपने वास्तविक और पुरातन स्वरूप में आ जाये। और वैदिक आर्य संस्कृति सभ्यता अपने पुरातन गौरवमय स्वरूप को धारण कर विश्व का पथ प्रदर्शन कर सके। ईश्वर हमारे राष्ट्रनायकों को इस सम्बन्ध में सुमति प्रदान करे-समीचीन वैसी ही जैसी कभी हिटलर महान् को प्रदान की थी।

భువః

'భువః' పదం ప్రజ్ఞానాన్ని - విశేషజ్ఞానాన్ని సూచిస్తుంది. దీనినే 'చిత్' అంటారు. మన జ్ఞానం స్వల్పం. పరిమితం. కొన్ని విషయాలే మనకు తెలుస్తాయి. పరమేశ్వరుడు పూర్ణజ్ఞాని. అతడు సర్వవ్యాపకుడు, సర్వజ్ఞుడు, సర్వశక్తిమంతుడు కావటంవల్ల అణువులు మొదలు సమస్త బ్రహ్మాండాలను తన వశంలో నుంచుకొని అణువులు మొదలు సమస్త బ్రహ్మాండాలను తన వశంలో నుంచుకొని నియమంగా నడిపిస్తున్నాడు. సర్వాంతర్యామియై సర్వ జీవులను, వారి సమస్త కర్మలను యథాతథంగా తెలుసుకుంటున్నాడు. వారి వారి కర్మలకు అత్యంత న్యాయంగా ఫలాల నిస్తున్నాడు. ఇంతేగాక, ఈ సృష్టిలోని సమస్త పదార్థాల జ్ఞానాన్ని వేదంద్వారా సృష్ట్యాదిలోనే ఉపదేశించిన జ్ఞానదాతయును అతడే. కను పరమేశ్వరుడు భువః పూర్ణజ్ఞాని-చిత్ స్వరూపుడు.

"భువ రితి అపానః - యః సర్వం దుఃఖమపనయతి సో అపానః" భువః పదము అపాన శక్తిని తెలువుతుంది. తాను సమస్త దుఃఖరహితుడై తన నుపాసించే జీవులను సమస్త దుఃఖాలనుండి విముక్తుని చేస్తాడు కనుక ఏకేశ్వరుడైన పరమేశ్వరునికే 'భువః' అని పేరు.

మన శరీరంలో అపానవాయువు మల మూత్ర స్వేద కఫాదులను వెడలగొట్టి శరీరాన్ని దుఃఖలనుండి విముక్తుని చేస్తాడు కనుక ఏకేశ్వరుడైన పరమేశ్వరునికే 'భువః' అని పేరు.

మన శరీరంలో అపానవాయువు మల మూత్ర స్వేద కఫాదులను వెడలగొట్టి శరీరాన్ని దుఃఖరహితంగా రోగరహితంగా చేస్తూ వుంటుంది. అట్లే పరమేశ్వరుడు తన ఆజ్ఞలను పాలించేవారి మనో మాలిన్యాలను పోగొట్టి వారి సమస్త దుఃఖాలను దూరంచేస్తాడు.

మనం మన చుట్టూ ఎప్పుడూ ఏవో దుఃఖాలను చూస్తూనే ఉంటాము. ఋషులు మనకు కలుగు దుఃఖాలను మూడు వర్గాలుగా విభజించారు. శరీరం ద్వారా కలిగే వివిధ రోగాలను, జన్మ జరా మృత్యువులను శరీరకదుఃఖాలన్నారు. మనస్సు ద్వారా కలిగే అనాయా రాగద్వేషాదులను, వివిధ భయాందోళనలను మానసికదుఃఖా లన్నారు. ఈ శారీరక మానసిక దుఃఖాల రెంటిని కలిపి ఆధ్యాత్మిక దుఃఖాలుగా పేర్కొన్నారు. ఇతర ప్రాణుల ద్వారా కలిగే దుఃఖాలను అధిభౌతిక దుఃఖాలన్నారు. దుష్టులనుండి, శత్రువులనుండి విష కీటక సర్పాదులనుండి కలిగే దుఃఖాలన్నీ ఈ వర్గంలోనికొస్తాయి. ఇక అతివృష్టి, అనావృష్టి, భూకంపాలు ఉప్పెనలు, అధిక శీతఆతపాలు మొదలైనవన్నిటిని కలిపి అదిదైవిక దుఃఖాలుగా వర్గీకరించారు. ప్రాణులన్నీ ఈ మూడురకాల దుఃఖాలతో పీడింపబడుతున్నాయి. ఈ త్రివిధ దుఃఖాల నుండి మనను తరింపజేయగలడు కనుక పరమేశ్వరునకు 'భువః' యనిపేరు. పరమేశ్వరుడు దుఃఖనాశకుడు కనుక అతని మైత్రిని కోరే మనంకూడా మన చుట్టూ ఉండే ప్రాణుల దుఃఖాలను దూరం చేయటానికి శక్తికొలది ప్రయత్నం చెయ్యాలి. అప్పుడే భువః యొక్క ఆరాధన అవుతుంది.

పరిశీలించి చూస్తే మానవు డనుభవించే దుఃఖాలలో 75 శాతం కోరితెచ్చుకున్నవే. మనిషి యింద్రియలోలుడై కొన్ని రోగాలను, బాధలను కొని తెచ్చుకుంటాడు. అహంకార అభిమానాలకు గురియై కొన్ని, అత్యాశకుబోయి కొన్ని, అనావశ్యకమైన పనులతో కొన్ని, శక్తికి మించిన పనులు చేబట్టి కొన్ని, ప్రొద్దుపోక వ్యర్థమైన ప్రసంగాలతో యితరులను బాధపెట్టి మరి కొన్ని ఈ విధంగా అనేకరకాలుగా మానవుడు దుఃఖాలను కొని తెచ్చుకుంటాడు. వీటిని నిరోధించాలంటే - జీవికకు అవసరమైనంతగా శ్రమించి మిగిలిన సమయాన్ని స్వాధ్యా సత్సంగ సామాజిక సేవలలో గడపాలి. సమయాన్ని సద్వినియోగంచేస్తే ఆత్మ పవిత్రమౌతుంది. ఆత్మానాత్మ వివేకజ్ఞానం కలుగుతుంది. మనస్సు నిర్మలము, ప్రశాంతము అవుతుంది.

ఎంతటి కష్టాలు వచ్చినా ధైర్యాన్ని విడనాడక సమస్త దుఃఖాలనుండి విడివించగల పరమేశ్వరుని యొడిలో తానున్నట్లు భావించి కర్తవ్య నిష్ఠుడైన వ్యక్తి శాంతిని పొందుతాడు. అనాయాసంగా కష్టాలనుండి విముక్తుడౌతాడు.

శక్తికి మించిన కష్టాలు కలిగినపుడు శ్రద్ధాభక్తులతో జ్ఞానపూర్వకంగా మనస్ఫూర్తిగా భగవంతుని ప్రార్థిస్తే అతని సహాయం మనకు లభిస్తుంది. అందుకు మనం నిజ జీవితంలో కొంత సాధన చెయ్యవలసి ఉంటుంది. మన పరిసరాలను పరిశీలిస్తే కష్టాలలో బాధలలో నున్న కొందరు కనబడకపోరు. ఇతరుల కష్టాలుకూడా తన కష్టాలవంటివే నని గుర్తించి వారికి సాయం చెయ్య యత్నించాలి. వేద భగవానుని సందేశ మేమంటే -

యస్మిన్ త్సర్వాణి భూతా నాత్మైవాభూద్విజానతః ।
తత్ర కో మోహః కః శోకః ఏకత్వ మనుపశ్యతః॥

-యజుర్వేదం (40-7)

ఏ జ్ఞానమయ స్థితయందుండి సమస్త ప్రాణుల సుఖదుఃఖాలు తన సుఖదుఃఖాల వంటివే యని గ్రహిస్తాడో, వారికి తగిన విధంగా సాయం చేస్తాడో అట్టి భక్తుడు శోక మోహాదుల నధిగమించి పరమశాంతిని పొందుతాడు.

స్వామీ వివేకానందులవారు చెప్పినట్లు, ఎవరు మానవ శరీరరూప దేవాలయాలలో నున్న దేవుని సేవిస్తారో వారే దేవునకు ప్రీతిపాత్రులౌతారు. అట్టి భక్తులకే భగవంతుని అనుగ్రహం లభిస్తుంది. 'భువః' పదం ఆ విషయాన్నే మనకు ప్రబోధిస్తున్నది. దుఃఖనాశకుడైన పరమాత్మ నుపాసించి మీరును దుఃఖనాశకులు కండంటున్నది.

'భువ రితి అంతరిక్ష నామ' (యాస్క నిఘంటువు). భువః పదము అంతరిక్ష సంజ్ఞా వాచకం. అంతరిక్షం అంటే భూమికి సూర్యునికి మధ్య ఉండే ప్రదేశం. దీనిలోనే వాయువు సంచరిస్తుంది. దీనికి 'వాతావరణ' మని మరియొక పేరు. మన జీవనానికి భూమి ఆధారమైనట్లే వాతావరణమును ఆధారమే. ఆహారం, నీరు లేక కొద్ది రోజులు జీవించవచ్చు కాని గాలి లేక కొన్ని నిముషములు జీవించుటయూ కష్టమే. కనుక అట్టి గాలిని మనం పరిశుభ్రంగా ఉంచుతూ జీవన చక్రంలో అనివార్యంగా కలుషితమౌతున్న గాలిని మరల శుభ్రం చెయ్యటం మన ధర్మం. అందుకు అగ్నిహోత్రం ఉత్తమ సాధనం. మనం నిత్యాగ్నిహోత్రులమై పంచభూతాల ఋణం తీర్చుకోవాలి' **'ఓం భువర్వాయవే అపానాయ స్వాహా'** - భువర్లోకమందలి దుఃఖనివారక వాయువున కీ యాహుతి నర్పిస్తున్నా, నంటూ ఆహుతు లివ్వాలి.

'భువః' పద సారాంశం

ఓ చిత్ స్వరూపా ! సర్వజ్ఞ సర్వేశ్వరా !

ఓ అంతర్యామీ ! పాపకార్యములందు మాకు భయాందోళనలు కలిగించి మమ్ము దుఃఖములనుండి దూరము చేయుము. ప్రాణి మనుగడ కాధారమైన వాతావరణాన్ని సృజించిన ఓ పరోపకారీ ! మేమును నీవలె పరోపకార పరాయణుల మగుదుము గాక !!

స్వః

'స్వః' అంటే ఆనందం. దుఃఖస్పర్శలేని నిరంతర సుఖాన్ని ఆనంద మంటారు. ఆ సుఖం కూడా అనంతంగా ఉండాలి. అట్టి ఆనందం కేవలం పరమేశ్వరునిలోనే ఉంది. పరమేశ్వరుడు తప్ప మిగిలిన ప్రాణులన్నీ ఏనో రకమైన బాధలను, ఆటంకాలను, అసంతృప్తిని అవమానాలను పొందుతూనే ఉంటాయి. ఏ దుఃఖాన్ని తప్పించుకున్నా మరణదుఃఖాన్ని ఏ ప్రాణీ తప్పించుకోలేదు. అట్లని ప్రాణులు సుఖాన్ని పొందటం లేదని చెప్పలేము. మానవుడు తనకు అనుకూలమైనవి ప్రాప్తించినపుడు, అనుకున్నవి సాధించినపుడు, పోటీలలో విజేతగా నిలిచినపుడు ఆనందాన్ని పొందుతాడు. ధనంవల్ల, బలంవల్ల, పరివారంవల్ల, అనుచరులవల్ల, అభిమానుల వల్ల ఆనందమగ్నుడౌతాడు. కానీ, ఇవన్నీ శాశ్వతాలా ? వీని వెనుక కష్టాలు, భయాలు లేవా ? అని ప్రశ్నించుకొని లోతుగా ఆలోచిస్తే- ఇవి శాశ్వతాలుకావనీ, వీటి వెనుక దుఃఖాలు దాగివున్నాయనీ అర్థమౌతుంది. అంతేగాక, మితిమీరిన సుఖానుభవం దుఃఖకారకమే అవుతుంది. మన యింద్రియశక్తులును పరిమితంగానే ఉంటాయి. మనం ఆ సుఖాలను కొద్దికాలమే అనుభవించగలం. కనుక మన సుఖం క్షణికం. దుఃఖమిశ్రితం.

పరమేశ్వరుని ఆనందం స్వాభావికం. అనంతం. త్రికాలాలలోను అది ఏకరసంగా ఉంటుంది. ఆ ఆనందం మన ఆనందంతో పోల్చతగినది కాదు. దానిని వర్ణింప మాటలు చాలవు. అంతర్యామియైన ఆ ఆనంద స్వరూపుని దర్శించిన యోగి అగ్నిస్పర్శవల్ల చలిబాధ పోగొట్టుకున్నట్లు ఆ ఆనందస్పర్శవల్ల సమస్త దుఃఖాలను పోగొట్టుకుని అనిర్వచ నీయమైన ఆనందాన్ని అనుభవిస్తాడు. దానినే 'సమాధి' అంటారు. అష్టాంగయోగ సాధనలో అది ఎనిమిదవ అంగము ఆ ఆనందాన్ని ఒక సిద్ధపురుషుడు ఈ విధంగా వర్ణిస్తాడు.

సమాధి నిర్ధూతమలస్య చేతసో
నివేశితస్యాత్మని యత్సుఖం భవేత్ ।
న శక్యతే వర్ణయితుం గిరా
తదా స్వయం తదంతఃకరణేన గృహ్యతే ॥

"స్థిర సమాధితో నిర్మలచిత్తుడైన జీవుడు అంతర్యామియైన ఆనందసాగరుని దర్శించినపుడు కలుగు సుఖానుభూతిని వర్ణించటానికి మా మాటలు చాలటంలేదు. అది స్వయంగా ఎవరంతటవారే అంతఃకరణంతో (బిద్ధితో) అనుభవించ వలసినదే" అన్నాడు.

'స్వ రితి వ్యానః' పరమేశ్వరుడు వ్యానవాయువు వంటివాడు. మన శరీరంలో వ్యానవాయువు శరీరమంతా సంచరిస్తూ ప్రతీ కణానికి ఆహారపానీయాల నందిస్తూ ప్రతీ కణాన్ని జీవింపచేస్తున్నది. అట్లే పరమేశ్వరుడు సర్వవ్యాపకుడై బ్రహ్మాండంలోని సర్వప్రాణులను పాలిస్తున్నాడు. పరమేశ్వరుని ఆ శక్తినే 'స్వః' అంటారు.

'స్వః' పదం స్వర్లోకాన్ని తెలుపుతుంది. సూర్యునినుండి ఆ పైన ఉండే నక్షత్రాల నన్నిటినీ కలిపి స్వర్లోకమంటారు. అది చాలా విశాలంగా ఉంటుంది. దాని అవధి ఎంతో నేటి ఖగోళవిజ్ఞానానికి కూడా అంతుబట్టడం లేదు. అది ఎంత విశాలంగా ఉన్నప్పటికీ దానికి అవధి ఉందంటాయి మన వేదశాస్త్రాలు. ఈ భూలోక భువర్లోక స్వర్లోకాలు మూడూకలిసి పరమేశ్వరునిలో ఏకపాదంగా - నాలుగింట ఒకవంతుగా ఉన్నాయంటుంది యజుర్వేదం. **"పాదోస్య విశ్వాభూతాని త్రిపాదస్యామృతం దివి"** (యజు. 32-3) మిగిలిన మూడు పాదాలు (మూడు భాగాలు) పంచభూతరహిత దివ్యలోకం. అది మృత్యురహితం. అమృతం. ఆనందమయం. అక్కడకే ముక్తజీవులు చేరుకుంటారు.

యత్రదేవా అమృత మానశానాః
తృతీయే ధామన్ అధ్యైరయన్త ॥
(యజుర్వేదం. 32-10)

ముక్త జీవులు ఆ తృతీయ ధామంలోనే నిరాటంకంగా విహరిస్తా రంటుంది పై వేదవాక్యం.

సామాన్య మానవులు నిత్యం సుషుప్తిలో (గాఢనిద్రలో) పొందే అనిర్వచనీయ సుఖం ఆ ఆనందస్వరూప పరమేశ్వరుని నుండియే. అలసియున్న శరీరాన్ని, మనస్సును సేదదీర్చి నూతనోత్సాహాన్ని కలిగిన్తున్నది. ఆ అంతర్యామియే. ఆ ఆనందస్వరూపుడే.

పరమేశ్వరప్రాప్తిని గోరు మనమును తోటి ప్రాణులకు సుఖశాంతుల చేకూర్చేవారము కావాలి. అదే 'స్వః' ఆరాధన. పరమేశ్వరుడు అగ్నిహోత్రంలో సుఖస్వరూపుడేగాక సుఖ ప్రదాతకూడా. మనకు లభించే ప్రతీ సుఖం వెనుక పరమేశ్వరుని కరుణ దాగివుంది. జీవులమైన మన పరిమాణం అతి స్వల్పం. పరమాణు పరిమాణం కన్నను చిన్న పరిమాణం. అట్లే మన జ్ఞానం, శక్తి సామర్థ్యాలునూ అల్పమైనవే. అట్టి జీవులమైన మనపై కరుణ వహించి మనను సుఖపెట్టుటకే పరమేశ్వరుడు ఈ చిత్ర విచిత్ర సృష్టిని గావించాడు.

'యాథాతథ్యతోర్థాన్ వ్యదధాత్ శాశ్వతీభ్యః సమాభ్యః' (యజు.40-8) అటుంది వేదం. శాశ్వతులు, సమానంగా వర్తమానులు నైన జీవులకొరకే ఈ ప్రపంచ పదార్థాల నన్నిటినీ ఏవి ఎట్లుండాలో అట్లు సృజించేనని స్వయంగా పరమేశ్వరుడే చెబుతున్నాడు.

పరమేశ్వరుడు ప్రకృతి పదార్థాలలో వివిధ రకాల శబ్ద స్పర్శ రూప రస గంధాల నేర్పరచి ఎన్నెన్నో సుఖాలకు నిలయంగా సృష్టిని గావించాడు. అట్లే, మనకు ఆ విషయ సుఖాలను గ్రహించగల యింద్రియాలతో గూడిన శరీరాలను సృజించి యిచ్చాడు. అందువల్లనే మనకు ప్రాపంచిక సుఖాలు లభిస్తున్నాయి. లేకున్న ఏ సుఖాన్నీ మనం పొందలేము. కనుక, మనం నిత్యం ఆ సుఖప్రదాతకు కృతజ్ఞతలు తెలుపుకోవలసిన ధర్మం మనపై ఉంది.

'కస్మై దేవాయ హవిషా విధేమ' (యజు. 23-3) యని నిత్యం ప్రార్థించాలి. అట్టి సుఖస్వరూపుడు, సుఖప్రదాతయునైన పరమేశ్వరునికి హవిస్సుల నర్పిస్తూ విధేయతను ప్రకటించుకోవాలని ఈ వేదవాక్యం చెబుతున్నది. వట్టి మాటలతో విధేయతను, కృతజ్ఞతను ప్రకటించటం సరియైన పద్ధతి కాదు. మనంకూడా కొంత పరోపకారం చేసి తోటి ప్రాణులకు సుఖాన్ని కలిగించాలి. అట్టి సత్కార్మలే పరమేశ్వరున కర్పించవలసిన అసలైన హవిస్సులు.

అగ్నిహోత్రంలో వేసే నెయ్యి, హోమ ద్రవ్యాలు మొదలైన హవిస్సులతోనూ కొంత పరోపకారం జరుగుతుంది. యజ్ఞాగ్ని వాటిని భస్మంచేసి గాలిలో కలుపుతుంది. గాలి వాటిని

పరిసరాలలో ఉండే ప్రాణుల కందిస్తుంది. అవి కొంత పైకెగసి మేఘాలలో చేరుతాయి. ఆ మేఘాలు వర్షించినపుడు తిరిగి భూమిని చేరుకుంటాయి. అగ్నిచే సూక్ష్మీకరింపబడిన ఆ పదార్థాలు ప్రాణులకు, పంచభూతాలకు విశేషమైన ప్రయోజనాన్ని కలిగిస్తాయి. ముఖ్యంగా వాటిని శుద్ధిచేసి ఆరోగ్యాన్ని, బలాన్ని, ఉత్సాహాన్ని స్ఫూర్తిని కలిగిస్తాయి. ఈ విధంగా అగ్నిహోత్రంలో వేసిన హవిస్సులు పరిమాణంలో కొద్దిపాటివైనా బహుళ ప్రయోజనాలను కలిగిస్తాయి. ఇంతేగాక, పక్షపాతం లేకుండా - నావారు, పరాయివారు అనే బేధం లేకుండా అందరికీ సమానంగా మేలు చేస్తాయి. కనుకనే యాజ్ఞవల్క్య మహర్షి తన శతపథ బ్రాహ్మణంలో 'యజ్ఞో వై శ్రేష్టతమం కర్మ - మనం చేసే సత్కర్మలలో యజ్ఞం శ్రేష్ఠతమ కర్మ - ఉత్తమోత్తమ కర్మ' అన్నారు.

అగ్నిహోత్రంలో మనం వేసే ఆహుతులు భూలోక భువర్లోకాలనేకాక స్వర్లోకాన్ని (సూర్యుని) కూడా సంస్కరిస్తాయి. మను మహర్షి చెప్పినట్లు -

అగ్నౌ ప్రాస్తాహుతిః సమ్యగాదిత్యముపతిష్ఠతే ।
ఆదిత్యా జ్జాయతే వృష్టిః వృష్టేరన్నం తతః ప్రజాః ॥

(మనుస్మృతి 3-76)

అగ్నిలో చక్కగా ఆహుతులుగా నివ్వబడిన పదార్థాలు క్రమంగా సూర్యలోకానికి చేరతాయి. అక్కడ యవి తన ప్రభావాన్ని చూపి సూర్యుని సంస్కరించి సమయానుకూల వర్షాలను కురిపిస్తాయి. వర్షాలనుండి అన్నము, (ఆహారము) అన్నం నుండి ర్పవణుల ఉత్పత్తి - పోషణ జరుగుతాయి.

వాయు జలముల శుద్ధితో లోకానికి చాలా మేలు జరుగుతుంది కనుక యజ్ఞములద్వారా భౌతిక స్వర్లోకాధిపతియైన సూర్యుని శక్తులను బలపరచి లోకకల్యాణమునకు తోడ్పడుటయు 'స్వః' ఆరాధనయే.

'ఓం స్వరాదిత్యాయ వ్యానాయ స్వాహా'

'స్వః' సారాంశం

ఓ ఆనందస్వరూప పరమేశ్వర ! వేదం ద్వారా వుపదేశించిన ధర్మకర్మల నాచరిస్తూ నిన్నుపాసింతుము గాక ! ధర్మకర్మ ఫలము నీకర్పించి రాగరహితులమై నీ ఆనందధామము చేరుదుము గాక !

తత్ సవితుః

సంస్కృత భాషలో 'తత్' అంటే అతడు, అది అని అర్థం. ఇది ఒక సర్వనామం. ఇచట దేనిని గురించి ఈ మంత్రం వివరిస్తున్నదో అది అని అర్థం. ఏది జగత్ప్రసిద్ధమో, దేనిని గురించి వేదశాస్త్రాలు, ఋషులు మునులు విశేషంగా చెబుతున్నారో అది. అంటే ఆ సచ్చిదానంద స్వరూప పరమేశ్వరుడు.

ఈ గాయత్రీమంత్రంలో పరమేశ్వరుని సవితా పదంతో పేర్కొనట్ జరిగింది. ఈ మంత్రానికి సావిత్రీమంత్రమనే ప్రసిద్ధి కలిగింది. సవితా పదం **'షుఞ్ - అభిషవే'** మరియు **'షూఙ్ - ప్రాణి గర్భవిమోచనే'** అనే ధాతువులతో నిర్మితమౌతుంది. అభిషవ మంటే ఉత్పత్తిచేయటం అని అర్థం. ఇచట ఈ పదం పరమేశ్వరుని జగదుత్పాదకశక్తిని సూచిస్తుంది. 'ప్రాణి గర్భవిమోచన' మంటే తల్లిగర్భంలో నిర్మించబడిన ప్రాణులను లేదా అండాలను గర్భంనుండి వెలుపలకు తీసుకురావటం. పరమేశ్వరుని ఈ రెండు శక్తులను సవితా పదం సూచిస్తుంది. జగత్ యొక్క సృష్టికి, ప్రాణిసృష్టికి అతడే ఏకైక చేతన నిమిత్తకారణం - కర్త, సవితా - సృష్టికర్త.

యాస్కమహర్షి తన నిరుక్త శాస్త్రంలో సవితా పదమును **'సవితా - సర్వస్య ప్రసవితా'** అని నిర్వచించాడు. ఆయన అక్కడ సవితా పదం భౌతిక సూర్యుని పరంగా చెప్పటం జరిగింది. ఈ అర్థానికి **'షూ-ప్రేరణే'** అనే ధాతువు మూలం. సంపూర్ణ జగత్తును తమతమ కార్యాలలో ప్రేరేపిస్తాడు కనుక భౌతిక సూర్యునికూడా 'సవిత' అనవచ్చు. కాని, మనం గాయత్రీమంత్రంతో సద్బుద్ధికొరకు ప్రార్థన చేస్తాం. అట్టి సద్బుద్ధి నివ్వగల శక్తి భౌతికసూర్యునిలో ఎక్కడుంది ? కనుక ఇచట సవితా పదం అంతర్యామియై సర్వప్రాణులకు ప్రేరణ కలిగించే పరమేశ్వరునికే వర్తిస్తుంది.

సృష్టి ఉత్పన్నం కాకపూర్వం ప్రళయావస్థ ఉంటుంది. అప్పుడు సత్వము, రజస్సు, తమస్సు అనబడే మూడు రకాల పరమాణువులు సామ్యావస్థలో విడివిడిగా ఉంటాయి. దానినే 'మూలప్రకృతి' అంటారు. అప్పుడది అంధకారంగా - అప్రకేతంగా - ఏమీ తెలియరాని విధంగా ఉంటుంది. అట్టి ప్రకృతిలో పరమేశ్వరుడు తన ఈక్షణతో క్షోభను కలిగిస్తాడు. వివిధ నిష్పత్తులలో సత్వరజస్తమస్సు లను పరమాణువులను కలిపి బంధించి వివిధమూలకాలను నిర్మిస్తాడు. ఆ మూలకాలతోనే వివిధ పదార్థాలను, ప్రాణులను సృజిస్తాడు. ఇదంతా జీవులు చేసే కర్మలకు ఫలాలనివ్వటానికే. తనకొరకు కాదు.

ఇప్పుడును సృష్టి సర్వత్రా జరుగుతూనే ఉంది. కనుక సవిత సర్వవ్యాపకము. అదే విషయం ఈ క్రింది వేదమంత్రం వివరిస్తున్నది.

సవితా పశ్చాత్తాత్ సవితోత్తరాత్తాత్ సవితోధరాత్ ।

సవితా నః సువతు సర్వతాతిం సవితానో రాసతాం దీర్ఘమాయుః ॥

(ఋ. 10-36-14)

సృష్టికర్తయైన సవితా నామక పరమేశ్వరుడు ముందు, వెనుక, క్రింద, పైన అన్నివైపులా అంతటా వ్యాపించి సృష్టిని గావించుచు మనను రక్షిస్తున్నాడు. అంతర్యామియై ప్రేరేపిస్తూ మనలను కర్మశీలుర చేస్తున్నాడు. అట్టి పరమేశ్వరుడు మనకు శుభములను, దీర్ఘాయువును ప్రసాదించు గాక !

అంతర్యామియైన పరమేశ్వరుని ఈ సవితాశక్తియే మనలను కర్మలయందు ప్రేరేపిస్తున్నది. ఆ ప్రేరణవల్లనే మానవుడు కర్మశీలుడై, ఆలోచనాపరుడై కవితలను, కవిత్వాలను సృజిస్తున్నాడు. శిల్ప, వైద్య, రసాయన, ఖగోళాది శాస్త్రాలతో అద్భుతమైన ఆవిష్కారాలను సాధిస్తున్నాడు. అనేక సుఖసాధనాలను సమకూర్చుకుంటున్నాడు. బుద్ధికి ప్రతిరూపమైన కంప్యూటర్లను నిర్మించి వాటితో మరెన్నో అద్భుతాలను సృజిస్తున్నాడు. ప్రపంచంలోగల సమస్త వైజ్ఞానిక ఆవిష్కారాల వెనుక ఈ సవితాశక్తి ప్రేరణయే ఉంటుంది. మనం ఆ ప్రేరణను లోక-కల్యాణానికి వినియోగించటం మన ధర్మం.

ప్రాణులలోని ప్రజనన శక్తిని - సంతానోత్పాదక శక్తిని సవితా అంటారు. అందుచే పర్యాయవాచకంగా తండ్రిని 'సవిత' అనవచ్చు. మానవులలోని సత్యాసత్య ధర్మాధర్మ వివేకశక్తిని కూడా సవితా అంటారు. దానితోనే మానవుడు ధర్మకార్యాల నాచరించి భౌతికోన్నతిని, యోగసాధన చేసి ఆత్మికోన్నతిని పొందుతాడు.

'తత్ సవితుః' సారాంశం

ఓ సృష్టికర్తవైన పరమేశ్వరా ! మాకు శరీరేంద్రియ మనోబుద్ధులను నిర్మించి యిచ్చిన ఓ తండ్రీ ! నీ ప్రేరణతో మా బుద్ధి వికసించి మేము జ్ఞానవంతులము, ధర్మాత్ములము అగుదుము గాక !

13వ సర్వదర్మ సమ్మేళనంలో 543వ ఉర్సు షరీఫ్ హజ్రత్ సయ్యద్ అహ్మద్ ఖతాల్‌హుసైని అష్రఫి జలాలి గ్రా॥ కొల్లంపల్లి, మహబూబ్ నగర్ జిల్లాలో ఆర్యప్రతినిధి సభ మంత్రి ప్రొ॥ శ్రీ విఠల్‌రావు ఆర్య గారు ప్రసంగిస్తున్నారు.

गणतंत्र दिवस का सन्देश

महापर्व गणतंत्र दिवस को मिलकर सभी मनाओ रे ।
अपने प्यारे आर्य वर्त्त को, दुनियां में चमकाओ रे ।।

राम कृष्ण की जन्म भूमि यह भारत देश हमारा है।
ऋषियों-मुनियों की धरती है, मान रहा जग सारा है ।।
अर्जुन भीम नकुल का भारत, सारे जग से न्यारा है ।
सत्य अहिंसा परमधरम, भारत वीरों का नारा है ।।

चाणक्य, चन्द्रगुप्त विक्रम की, जग को याद दिलाओं रे ।।
अपने प्यारे आर्य वर्त्त को, दुनियां में चमकाओ रे ।।

फूट आपसी के कारण, भारतवासी परतंत्र रहे ।
दुष्ट विधर्मी विदेशियों के, भारतीयों ने जुल्म रहे ।।
इज्जत लुटी देवियों की, सौनित के दरिया यहां बहे ।
इज्जत लुटी देवियों की, सौनित के दरिया यहां बहे ।
अत्याचार हु थे मारी, हम से जाते नहीं कहे ।।

पढ़ो सभी इतिहास ध्यान से, समझो अरु समझाो रे ।
अपने प्यारे आर्य वर्त्त को, दुनियां में चमकाओ रे ।।
ईश्वर की कृपा से फिर, जागे भारत के नर-बंका ।
बापा रावल सांगा ने, था बजा दिया रण का डंका ।।

महाराणा प्रताप शिवा ने, नहीं काल की, की शंका ।
पापी हत्यारे यवमों का, जला दिया था गढ़ लंका ।।

सती पद्मणी कर्णवती की, गौरव गाथा गो रे ।
अपने प्यारे आर्य वर्त्त को, दुनियां में चमकाओ रे।।

जगत गुरु ऋषि दयानन्द ने, सोया देश जगाया था।
तात्या टोपा, तुलाराम को, वैदिक पथ दर्शाया था।।
नन्द किशोर मंगल पाण्डेय को, ऋषि ने शिष्य बनाया था ।।
नाहर सिंह लक्ष्मी बाई को, धर्म-कर्म समझाया था।।

बहादुर शाह अरु कुंवर सिंह से, वीर बनो यश पाओ रे ।
अपने प्यारे आर्य वर्त्त को, दुनियां में चमकाओ रे ।।

तिलक गोखले नौरोजी ने, भारी लड़ी लड़ाई थी ।
स्वामी श्रद्धानन्द जी ने, सीने पर गोली खाई थी ।
वीर लाजपत, बिस्मिल, शेखर, भारत के दीवाने थे ।
राज गुरु सुखदेव भगत सिंह, देश भगत मर्दाने थे।।

ऊधम सिंह अरु मदन लाल बन, जग में दूम मचाओ रे ।
अपने प्यारे आर्य वर्त्त को, दुनियां में चमकाओ रे ।।

भारत के सब युवक-युवतियो ! जागो धर्म निभाओ तुम ।
भारत वीर शहीदों की, खुश होकर गाथा गाओ तुम ।
चरित्रवान ईमानदार बन, जग में नाम कमाओ तुम।
चरित्रवान ईमानदार बन, जग में नाम कमाओ तुम ।
कहने का अब समय नहीं है, करके काम दिखाओ तुम।।

''नन्दलाल'' निर्भय वीरो ! दुष्टों के शीश उड़ाओ रे ।
अपने प्यारे आर्य वर्त्त को, दुनियां में चमकाओ रे ।।

...पं. नन्दलाल 'निर्भय' भजनोपदेशक

Dateof Publication 2nd & 17th of every Month, Date of posting 3rd and 18th of every month

आर्य जीवन 03-02-2018 Registered-Reg. No. HD/783/2018-20 RNI No. 52990/93

To,,

ఆర్య జీవన్

హిందీ-తెలుగు ద్విభాషా పక్ష పత్రిక

Editor: **Vithal Rao**, M.Sc. LL.B., Sahityaratna
Arya Prathinidhi Sabha AP-Telangana, Sultan Bazar, Hyderabad-95.
Phone No. 040-24753827, 66758707, Fax : 040-24557946
Request to donate Rs. 250/- సంపాదకులు : విఠల్ రావు, మంత్రి సభ

आर्य प्रतिनिधि सभा आ.प्र.-तेलंगाना सुल्तान बाज़ार में स्थित सभा कार्यालय एवं वैदिक आश्रम कन्यागुरुकुल कुंदनबाग, बेगमपेट, हैदराबाद में दि. २६ जनवरी २०१८ के ६९ वे गणतंत्र दिवस पर ध्वजारोहण करते हुए सभा प्रधान ठा. लक्ष्मण सिंह जी, उपप्रधान श्री हरिकिशन जी वेदालंकार, पुस्तकाध्यक्ष श्री बसीरेड्डी जी तथा सभा के कर्मचारी एवं अन्य सदस्य गण ।

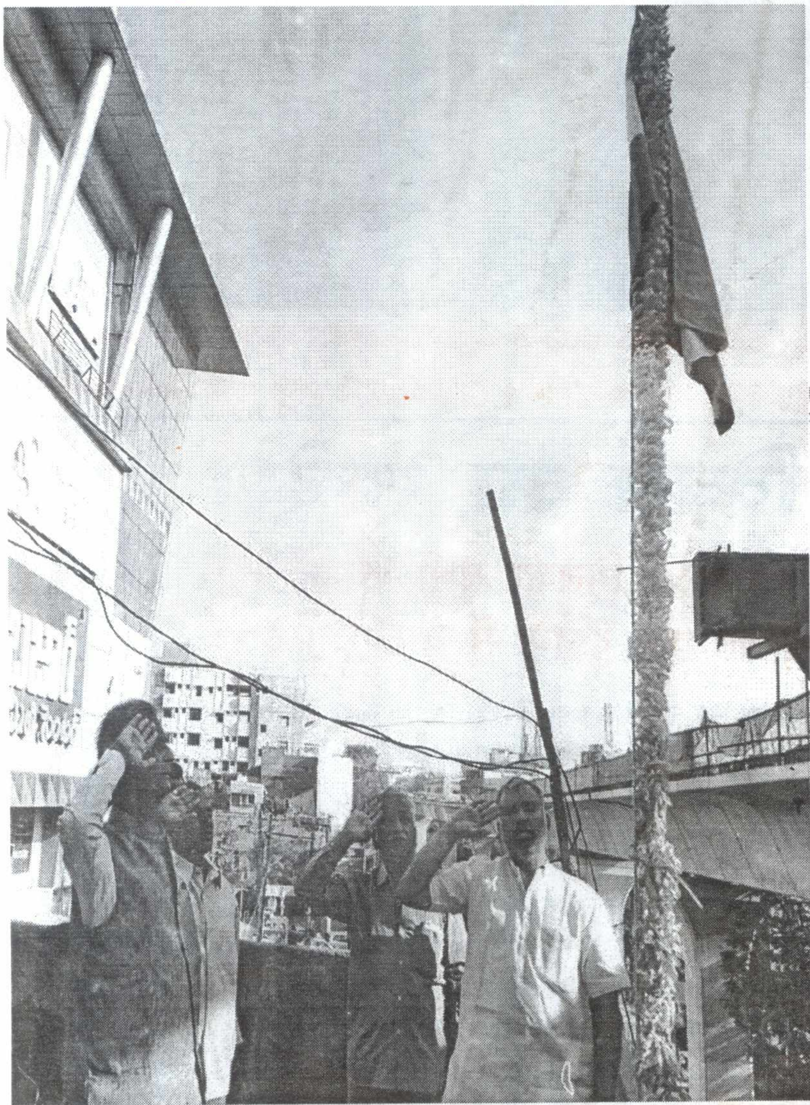

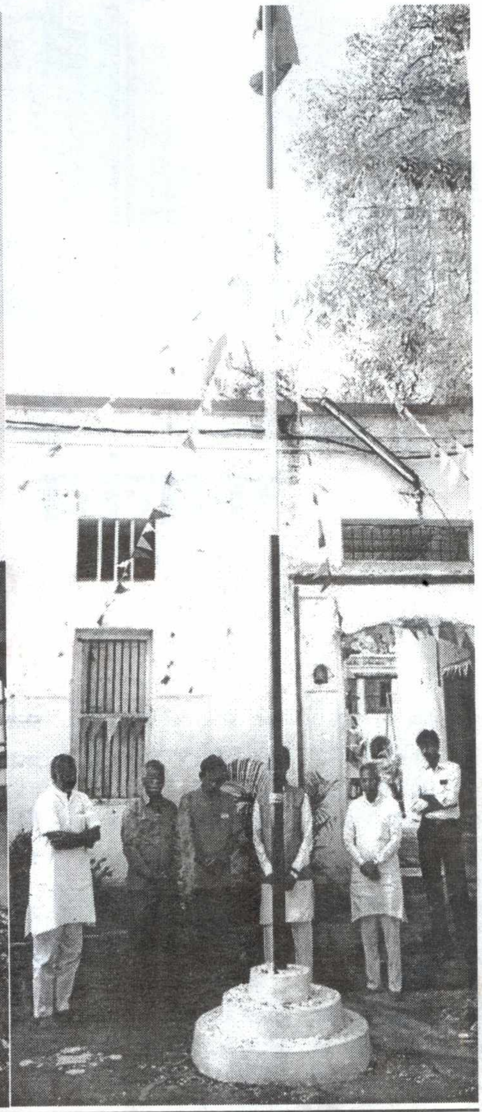

THE VIEWS & THE NEWS PUBLISHED IN THIS ISSUE MAY NOT NECESSARILY BE AGREEABLE TO THE EDITOR
Editor : Vithal Rao Arya ● Email : acharyavithal@gmail.com, Mobile : 09849560691

సంపాదకులు : శ్రీ విఠల్‌రావు ఆర్య మంత్రి సభ, ఆర్యప్రతినిధి సభ ఆ.ప్ర.-తెలంగాణ, సుల్తాన్‌బజార్, హైదరాబాద్-95. Ph: 040-24753827, Email:acharyavithal@gmail.com

संपादक : श्री विठ्ठलराव आर्य मंत्री सभा ने सभा की ओर से समता आकृति प्रिन्टर्स में मुद्रित करवा कर प्रकाशित किया ।

प्रकाशकः आर्य प्रतिनिधि सभा आं.प्र.-तेलंगाना, सुल्तान बाज़ार, हैदराबाद तेलंगाना-500095.